श्रीशंवंदे

घनश्याम महाभारत

संग्रहकर्ता तथा प्रणेता

स्वर्गीय श्रीमान् बाबू घनश्याम
नारायण जी "भाटिया"

—:※:—

क्रमवद्ध करके सार्वजनिक हितार्थ मुद्रित कराई। अब सहृदय
पाठकवृन्दों से विनम्र निवेदन है कि त्रुटियों की ओर ध्यान
न देकर अभिरुचि दर्शाते हुए श्रद्धेय श्रीमान् के
परिश्रम को सार्थक करें और पठन-पाठन
द्वारा लाभ उठावें तथा शुभाशीर्वाद
द्वारा श्रद्धेय की आत्मा को
शांति प्रदान करें।

—:※:—

प्रकाशक
राय साहब रामदयाल अगरवाला

१९३१

विशेष द्रष्टव्य

पाठकों का विचार हो सकता है कि जब महाभारत विषयक अच्छी अच्छी पुस्तकें लोगों के सामने हैं तब महाभारत विषयक पुस्तक बनाने की क्या आवश्यकता थी ? निवेदन है कि जब ग्रंथ-कर्त्ता ने इस विषय की कई पुस्तकें पढ़ीं तब देखा कि पुस्तकें बड़ी २ हैं इसलिये मूल्य अधिक होने तथा पुस्तक बड़ी होने से सर्वसाधारण इससे समुचित लाभ नहीं उठा सकते इसीलिये पुस्तकों का सार लेकर सूक्ष्म रूप से इसकी रचना की गई है। सागर को गागर में लाने का प्रयत्न किया गया है।

हमारे बहुत से भाई अपने नामे नामी पूर्वजों की कीर्त्ति गाथा भुलाये सी डालते हैं। उसी कमी को पूरा करने के लिये यह पुस्तक लिखी गई है। हमारे भाई हमारे इस कहने की धृष्टता को क्षमा करेंगे।

यह पुस्तक प्रथम बार उर्दू भाषा में छपवाई गई थी पर हिन्दू जाति की भाषा हिन्दी है संभव है कि उर्दू भाषा से लोग विशेष संख्या में लाभ न उठा सकें इसीलिये सर्वसाधारण के लाभार्थ अब हिन्दी भाषा में छपवाई जा रही है । हिन्दी भाषा में अनुवाद करने में मुझे पं० रामसनेही जी हेडमास्टर टौन स्कूल औरैया से पर्याप्त सहायता मिली है जिसके लिये मैं उनका कृतज्ञ हूँ।

निवेदक :—

प्यारेलाल सिंह भाटिया तहसीलदार

औरैया प्रांत इटावा।
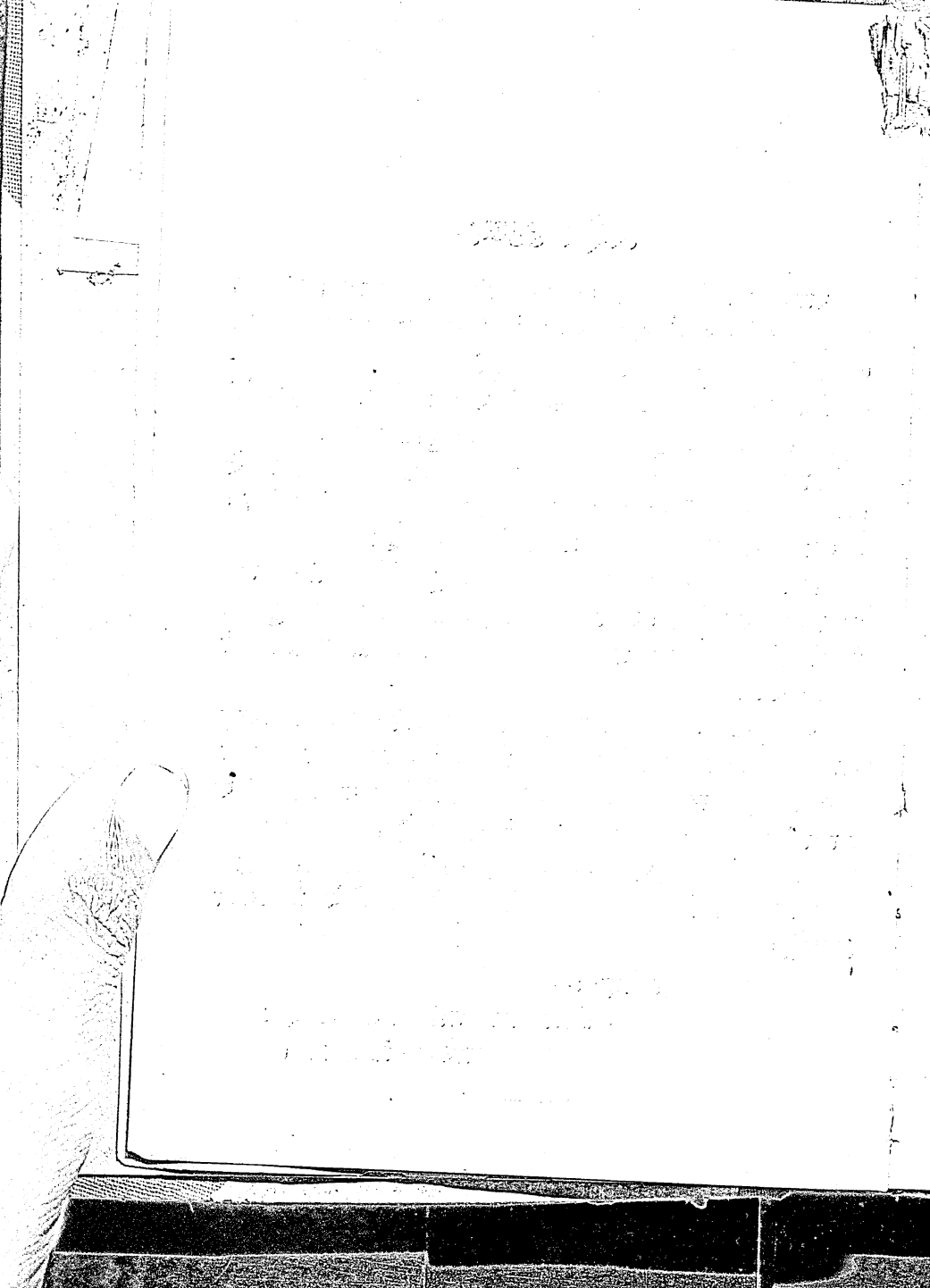
श्रीगणेशाय नमः

भूमिका

उस सर्वशक्तिमान् परमात्मा को कोटिशः धन्यवाद है जिसकी माया की प्रेरणा से अनोखी सृष्टि प्रकट हुई और उस ईश्वर को बारम्बार नमस्कार है जिसने अपनी शक्ति से विविध प्रकार की रचना की और मनुष्य को विशाल बुद्धि देकर श्रेष्ठतम बनाया। जिसके साक्षी उत्तम २ ग्रंथ हैं। व्यास जी कृत महाभारत की गणना पाँचवें वेद में है। व्यास जी को धन्य है। किसी ने ठीक ही कहा है कि :—

स्तुतिः

नमोऽस्तुते व्यास विशाल बुद्धे फुल्लारविन्दायत पत्र नेत्र।
येन त्वया भारत तैल पूर्णः प्रज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः॥

ऐ भक्ति रस पर मर मिटने वालो, प्रेम व आनन्द पर प्राण देने वालो, सच्चाई के मैदान में प्राण त्यागने वालो, इन्हीं महर्षि की पुस्तकों रूपी समुद्र का एक छोटा सा मोती, परन्तु चमकदार, इन्हीं के प्राचीन शस्त्रागार की एक छोटी सी कटार, परन्तु पैनी और बाढ़दार, जो सच्चे भक्तों को आनन्द देने के लिये अदृश्य पटल से बाहर आई अर्थात् भगवान वेद व्यास कृत महाभारत नामी पुराण जो बृहद् ग्रन्थ संस्कृत में है जो शूरवीर क्षत्री जाति के कृत्यों से भरा पूरा है, उसी का सूक्ष्म सारांश लेकर महात्मा, सज्जन और भक्त जनों को आनन्द रस का पान कराने के लिये स्वर्गवासी श्रीमान पिता बाबू घनश्यामनारायण जी ने इतना बहुमूल्य समय लगाकर इस ग्रन्थ को संक्षेप में रचा। मुझ को

इस पुस्तक के छपवाने में श्रीमान महात्मा स्वामी निर्भयानन्द जी ने अपना अमूल्य समय देकर सहायता पहुँचाई। इस के लिये उन्हें सच्चे हृदय से धन्यवाद दिया जाता है। आशा है कि सज्जन और सतसंगी पुरुष इस को पढ़ कर दास का उत्साह बढ़ावेंगे। हिन्दी लिपि में अनेक आवश्यकीय बातें बढ़ाकर इसको और भी अधिक रोचक व उपयोगी बनाने का प्रयत्न किया गया है।

ओ३म् शम्

सेवकः—
प्यारेलालसिंह तहसीलदार
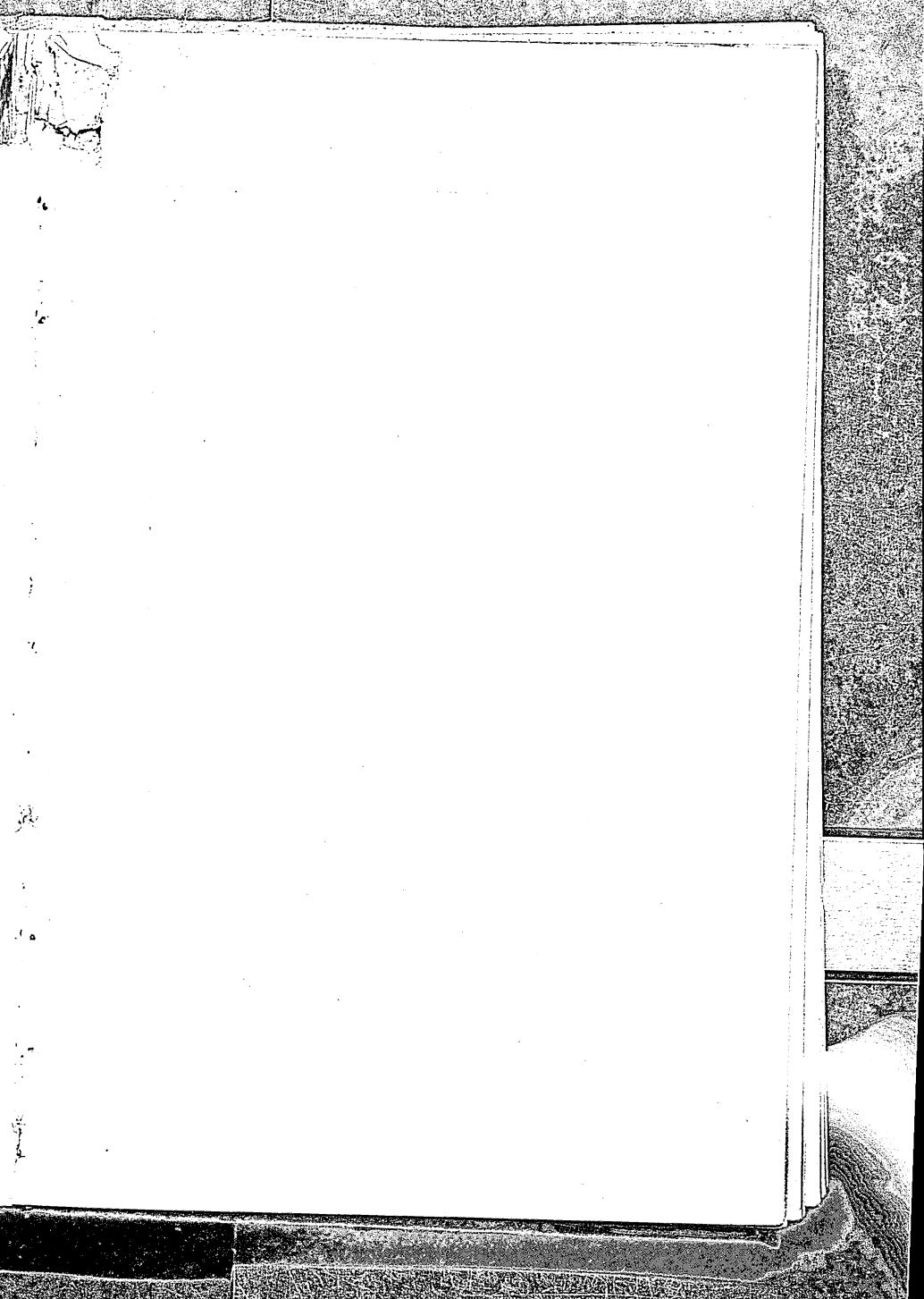
स्वर्गीय श्रीमान् बाबू घनश्याम नारायण जी "भाटिया"

घनश्याम महाभारत की अशुद्धियाँ तथा उनकी शुद्धियाँ

सफ़ा	पंक्ति	अशुद्धता	शुद्धता
५	६	किसा	किसी
६	२२	की	क्री
१२	१२	द्वारका	द्वारिका
,,	२१	व	ब
२०	२१	नाम का था	का नाम था
२१	१८	व	ब
२२	१९	भलो भाँति	परशुराम
३१	२६	।कस	किसी
३७	२३	द्राणाचार्य	द्रोणाचार्य
४१	२०	जा	जो
४२	११	द्रो	द्रौ
६०	१६	कुन्ता	कुन्ती
६५	२	अजुन	अर्जुन
६६	८	दुयोधन	दुर्योधन
७१	९	अमोच	अमोघ
७२	१०	अनुगेध	अनुरोध
७३	१६	।शर	शिर
,,	२१	कृन	कृत

सफ़ा	पंक्ति	अशुद्धता	शुद्धता
७३	२४	दुर्पोधन	दुर्योधन
७४	१८	गांधार	गांधारी
८६	७	पेना	पेनी
८८	२१	ख़दाई	.खुदाई
९१	१	सम्वाद	सम्बाद
९३	२४	दशा	दर्शी
९५	६	पुन	पुनः
१०१	४	प्रतात	प्रतीत
१०५	१९	वतमान	वर्तमान
१०६	२५	वाणा	वाणी
१०७	११	मिट्टा	मिट्टी

दृश्य वृन्दावन

श्री जगदीश बृन्दावन विहारी।
श्री राधारमण मोहन मुरारी॥
श्री गोविंद राधा कृष्ण गोपाल।
मदनमोहन श्री घनश्याम नंदलाल॥
श्री मुरली मनोहर श्यामसुन्दर।
श्री भगवान गोपीनाथ गिरधर॥
श्री यदुपति श्री बाँकेविहारी।
चतुर्भुज श्याममूरत चक्रधारी॥
श्री जगदात्मा माधव विधाता।
दयालू दीनबंधू प्राणदाता॥
मुकुटधारी मदन गोपाल मोहन।
नवल सुन्दर छबीले लाल मोहन॥
कन्हैया नंदनंदन नंद प्यारे।
अधिक आनंदप्रद यशुदा दुलारे॥
समाये हो सच्चाई में सुप्यारे।
सच्चाई के तुम्हीं सच्चे सहारे॥
तुही है काशिफ़े इसरार अज़ली।
तुही है रू नुमाई हुस्न अबदी॥
तुही है जलवा फ़रमाये दो आलम।
तुही है ख़ुद तमाशाये दो आलम॥
तुही लौहे तिलिस्मो जानो तन है।
तुही बख़्शिन्दहे रूहो बदन है॥
तुही वहिशत फ़िज़ाये इश्क़ रुसवा।
तुही नक़्शो निगारे हुस्ने ज़ेबा॥

तुही है मूजिदे ईजादे कौनैन।
तुही है बानिये बुनियादे कौनैन॥
तुही है इश्क़ अज़ली हुस्न जावेद।
तुही है खिल्वते दिल बज़्म तौहीद॥
तुही है रौनक़े गर्मीये बाज़ार।
तुही ख़ुद जिंस तू ही ख़ुद ख़रीदार॥
तुही है नग़मये बुलबुल चमन में।
तुही गुञ्चा तुही है गुल चमन में॥
तुही परवाना तूही शमअ़ महिफ़िल।
तुही गुलबन तुही शोरे अनादिल॥
तुही लछमन तुही सीता तुही राम।
तुही गोपी तुही राधा तुही श्याम॥
ज़मीनो चर्ख़ो मिहरो माह तेरे।
दो आलम हैं तमाशागाह तेरे॥
फ़ना तर्ज़े ख़िरामे नाज़ की आन।
बक़ा इक लब की तेरे मंद मुसकान॥
बुते चितचोर माखन के लुटेरे।
हयातो मौत दोनों खेल तेरे॥
मिलाये तूने हस्तो नेस्त बाहम।
घरौंदा तेरा बाज़ीगाह आलम॥
ज़बाने सब्ज़ा नातिक़ है सना में।
कि है सर गर्म हर ज़र्रा हवा में॥
नमूदे आफ़िरीनश है तुझी से।
वजूदे आफ़िरीनश है तुझी से॥
तुही ख़ल्लाक़ है कोनो मकाँ का।
तुही रज़्ज़ाक़ है हर इन्सो जाँ का॥

अलग कब तुझ से तेरी गुफ़्तगू है।
गरज़ इक तू ही तू है तू ही तू है॥
तुही है सब से बरतर सब से बाला।
तुही है हाले इसियाँ सुनने वाला॥
अधम बिगड़े हुए लाखों सँवारे।
मेरी भी टेर सुन ले प्रानप्यारे॥
शहंशाहे जहाँ आलम पनाहे।
बराये ख़ुद सूये शोला निगाहे॥
अजब है कुछ तेरी हालत का इज़हार।
सरासर हों अधम पापी गुनहगार॥
न लायक़ इल्तिमासो इल्तिजा के।
न क़ाबिल अपनी अरज़े मुद्दआ के॥
नदामत नामए ऐमाल से है।
ख़िजालत आप अपने हाल से है॥
निकम्मा हूँ निकम्मी ज़िंदगी है।
मेरी हस्ती को ख़ुद शर्मिंदगी है॥
न उक़बा का न दुनिया का न दीं का।
अजब कुछ हूँ नहीं लेकिन कहीं का॥
वह नंगे इख़्तलाते आबोगिल हूँ।
कि रब्ते जिस्मो जाँ से मुनफ़इल हूँ॥
अलग हूँ दूर हूँ सब से जुदा हूँ।
अजब बेकस हूँ बे बर्गो नवा हूँ॥
न कोई छोड़ जाने की निशानी।
न कोई यादगारे ज़िन्दगानी॥
हज़ारों हैं गुनाहों की गवाही।
सफ़ेदी पर हैं क्या क्या रूसियाही॥
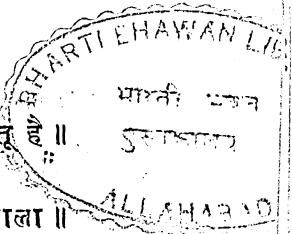
न ज़िक्रे हक़ है नै फ़िक्रे अमल है।
न कर्मो धर्म नै विद्या न बल है॥
न जोगी हूँ न संन्यासी जती हूँ।
न रिन्दे बादकश नै मुत्तक़ी हूँ॥
न ज़ाहिद हूँ न हूँ मस्ते ख़राबात।
न आबिद हूँ न हूँ अहिले करामात॥
न साधू हूँ न बैरागी न अवधूत।
न लाहूती न जबरूती न मलकूत॥
मेरी ग़फ़लत की हद कुछ भी नहीं है।
ख़याले नेको बद कुछ भी नहीं है॥
नहीं छूने के क़ाबिल जिस्मनापाक।
मिलेगी किस तरह से ख़ाक में ख़ाक॥
ग़रज़ जो कुछ हूँ तुझ को ही ख़बर है।
मेरा अंजाम क्या मद्दे नज़र है॥
हमेशा है गुनहगारों पै रहमत।
हमेशा है तेरी बख़्शिश की आदत॥
किया दुश्मन का भी उद्धार तूने।
उतारा डूबतों को पार तूने॥
दयालो दीनबन्धो के सहारे।
थका बैठा हूँ मंज़िल के किनारे॥
नहीं इक वक़्त का तोशा बग़ल में।
झुका पड़ता है सर फ़िक्रे अमल में॥
कुढब रस्ता है और मंज़िल कड़ी है।
जो गठरी सर पै है बोझिल बड़ी है॥
न पस्ती ओ बलन्दी का ठिकाना।
हज़ारों क़ाफ़िले गो हैं रवाना।

न रहबर कोई राहे पुरख़तर में।
अँधेरा होगा हर जानिब नज़र में॥
बुरा है वक़्त वह जिसका कि डर है।
समाँ ये है कि जो पेशे नज़र है॥
दमे आख़िर रवाँ आँखों में होगा।
किसी दिन ये समाँ आँखों में होगा॥
बदलती हों मुहब्बत की निगाहें।
हर इक जानिब हों हसरत की निगाहें॥
दमे रुख़सत हो घरवालों ने घेरा।
खड़ा हो सब लदा असबाब मेरा॥
हुजूमे अहिल मातम हो सिराने।
अज़ीज़ों अक़रबा ख़ेशो यगाने॥
हर इक की हो निगाहे हसरते आलूद।
खड़ी हो बेकसी बाली पै मौजूद॥
अजब मायूस हो नाकाम दुनिया।
तपाँ हों हम असीरे दाम दुनिया॥
किसी को एक दम की इन्तिज़ारी।
किसी के दिल में हो फ़िक्रे सवारी॥
मेरे हर काम बाहम बँट रहे हों।
उठाने वाले भाई छँट रहे हों॥
ग़रज़ सामाने रुख़सत जब हो तैयार।
पड़े जाँ और अजल में आके तकरार॥
उसे तामील हो हुक्मे क़ज़ा की।
उसे हो ढील अर्ज़ें मुद्दआ की॥
वह बिफरी हो कि आगे धर के निकलूँ।
ये मचली हो कि दर्शन करके निकलूँ॥

पड़ा झगड़ा हो कुछ आपस में भारी।
लगी हो बस तुम्हारी इन्तिज़ारी ॥
नज़र आ जावे छबि बाँकी अदा की।
मुँदें आँखें तो हो झाँकी अदा की ॥
तसव्वुर रिश्तये जाँ में जकड़ लूँ।
छुटे जब नब्ज़ तब दामन पकड़ लूँ ॥
जब आये आँख में दम प्राणप्यारे।
लगा हो ध्यान चरणों में तुम्हारे ॥
वही हो ध्यान जिस को मैं दिखाऊँ।
वही झाँकी हो जिसको मैं बताऊँ ॥

झाँकी

कदम की छाँव हो जमुना का तट हो।
इधर मुरली हो माथे पर मुकट हो ॥
खड़े हों आप इक बाँकी अदा से।
मुकट झोकों में हो मौजे हवा से ॥
खमीदा नाज़ से हो क़द्दे वाला।
मुकट घेरे हुए हो मुँह का हाला ॥
सितारे जड़ रहे हों पीत पट से।
गुँथी मोती की लड़ियाँ हों मुकट से ॥
कसी नाजुक कमर हो काछनी से।
बँधी बंशी हो जामे की तनो से ॥
गले में हों जड़ाऊ हार हैकल।
पड़े गुल गोश में हों क्रीट कुंडल ॥
भरी गजरों से हो नाज़ुक कलाई।
बने हों बर्गे गुल दस्ते हिनाई ॥

पड़ी सिंगार की हों फूल माला ।
गले में दस्ते शौक़े वृज की बाला ॥
बराबर हों श्री राधाकिशोरी ।
मधुर सुर बाँस की बजती हो पोरी ॥
कमर उलझी हुई नाज़ुक कमर से ।
हो उलझा पीत पट पीताम्बर से ॥
मुकट है चन्द्र का हाला से हाला ।
कड़ों से हार बन माला से माला ॥
लड़ी बेसर से और मुक्ता से मकतूल ।
लटों से कीटोकुंडल से करनफूल ॥
इधर उलझे हुए बाज़ू से बाज़ू ।
उधर उलझे हुए गेसू से गेसू ॥
सफ़ाये रंग से हो आयना दंग ।
झलकता गौर में हो शाम का रंग ॥
तबस्सुम हो दमें नज़्ज़ारह बाहम ।
अयाँ इक छबि में हो हुस्ने दो आलम ॥
जुदा हों गो बराये नाम दोनों ।
बने हों एक राधा श्याम दोनों ॥
बहम दीगर हों अक्से हुस्ने जेबा ।
कन्हैया राधा हों राधा कन्हैया ॥
जो हो यों हुस्ने यकता का नज़ारा ।
बहारे रूये जेबा का नज़ारा ॥
गिरे गर्दन ढुलककर पीत पट पर ।
खुली रह जायें ख़ुद आँखें मुकट पर ॥
अगर इस छबि का आख़िर में समाँ हो ।
मेरा मरना हयाते जाविदाँ हो ॥

दुशाले की एवज़ हो ब्रज की धूल।
पड़ें उतरे हुए सिंगार के फूल ॥
मिले जलने को लकड़ी ब्रज के बन की।
बने अकसीर यों फुक कर बदन की ॥
ग़रज़ इस तरह हो अंजाम मेरा।
तुम्हारा नाम हो और काम मेरा ॥
ये दौलत छोड़ दूँ नादाँ नहीं हूँ।
बहिश्तो मोक्ष का ख़्वाहाँ नहीं हूँ ॥
तुम्हीं को शर्म है जाँ के दिये की।
तुम्हीं को लाज है पैदा किये की ॥
रहूँ ता इख़्तलाते आबोगिल में।
रहे नक़्शा इन्हीं चरणों का दिल में ॥
ज़बाँ तक दहिन में हो न बेकार।
पुकारा ही करूँ सरकार सरकार ॥
हमेशा दर्द हो नामे गिरामी।
हमेशा हो ज़बाँ पर नामे नामी ॥
इसी आनन्द में बाक़ी बना हूँ।
न मुहताजे अज़ीज़ो अक़रबा हूँ ॥
किसी के सामने फैले न दामन।
न इहसाँ हो किसी का बारे गर्दन ॥
रहूँ बाग़े जहाँ में रंगों बू से।
कटें दिन ज़िन्दगी के आबरू से ॥
उगे सर्वे सही बाला तो अच्छा।
अगर हो मर्ज़ीयेवाला तो अच्छा ॥
रवाँ बहरे करम हो सैल दर सैल।
रहे दुनिया की दौलत हाथ का मैल ॥

भरोसा है मुकटधारी तुम्हारा ।
तुम्हारा ही है बनवारी तुम्हारा ॥
ग़रज़ हो जब कभी झगड़ा मेरा तै ।
कहैं सब बोलो राधाकृष्ण की जै ॥

दृश्य—बज़्म वृन्दावन पर एक दृष्टि

प्यारे पाठको बज़्म वृन्दावन को पढ़िये। देखिये ग्रन्थकर्त्ता ने अपने भावों तथा भक्ति का कैसा मनोहर चित्र खींचा है। बज़्म वृन्दावन ग्रन्थकर्त्ता के हृदय के बहते हुए उद्गार हैं। कितने सजीव, सरस व भक्तिरस पूर्ण हैं। ग्रन्थकर्त्ता की जीवनी पुस्तक के अन्त में दी गई है उसमें ग्रन्थकर्त्ता की भगवत् चरणों में भक्ति दिखाई गई है। बज़्म वृन्दावन का एक एक पद पढ़िये। प्रत्येक पद से क्या भाव टपकता है ? उसे कसौटी पर कसिये। पदों से ही भाव टपकता है। झाँकी को देखिये कैसी बाँकी है ?

निवेदकः—
प्यारेलाल सिंह

(२)

जीवनी कृष्णचन्द्र जी तथा बलराम जी

चूँकि महाभारत से दुखनिकंद आनन्दकंद श्री कृष्णचन्द्र जी का गहरा सम्बन्ध है, इसलिये प्रारम्भ में उन्हीं का यशोगान कर कथा का प्रारम्भ किया जाना श्रेयस्कर होगा, अतएव अवतार का कारण दर्शाते हुए जीवनी का सूक्ष्मांश दिया जाता है।

नमो ब्रह्मण[1] देवाय गो[2] ब्राह्मण[3] हितायच।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः॥
जब जब होय धर्म की हानी।
बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी॥
तब तब प्रभु धरि मनुज शरीरा।
नाशत सकल कठिन भव पीरा॥
जिनके चरण सरोरुह लागी।
करत विविध जप योग विरागी॥
निर्गुण निराकार प्रभु जोई।
नर तनु धरत भक्त हित सोई॥

जब द्वापर युग में कंस आदि असुरों का बल बढ़ा, अत्याचार से धर्म घटा, पाप बढ़ा तब पृथ्वी भय खाय अति व्याकुल हो सृष्टि रचयिता ब्रह्मा जी से जा पुकारी, तब ब्रह्मा जी पृथ्वी को अति दुखित देख देवताओं को साथ ले क्षीरसागर निवासी घट घट वासी विष्णु भगवान के पास गये। जाते ही देखा कि:—

शेष सेज सोहत भगवाना।
रमा चरण चापैं विधि नाना॥
कौस्तुभ कण्ठ वक्ष वनमाला।
रत्न किरीट प्रकाश विशाला॥

श्रीनन्दकिशोर

शंख चक्र कर कमलन सोहै।
गदा पद्म देखत मन मोहै॥
अस हरि रूप अनूप निहारी।
कर प्रणाम अस्तुति अनुसारी॥

जय जय सुरनायक जन सुखदायक प्रणत पाल भगवन्ता।
गोद्विज हितकारी जय असुरारी सिंधु सुता प्रिय कन्ता।
हो भव-भय-भंजन जन-मन-रंजन गंजन विपति बरूथा।
मन-वच-क्रम-वाणी छाँड़ि सयानी शरण सकल सुर यूथा।
भववारिधि मन्दर सब विधि सुन्दर गुण मंदिर सुख-पुंजा।
मुनि सिद्ध सकल सुर परम भयातुर नमत नाथ-पद-कंजा।
पालन सुर धरणी अद्भुत करणी मर्म न जानहिं कोई।
जो सहज कृपाला दीनदयाला करहु अनुग्रह सोई।

देवताओं की ऐसी विनीत विनती सुन द्रवित हो दयानिधान, सुख-खानि विष्णु भगवान बोले कि घबराओ नहीं मैं शीघ्र ही नर-तनु धारण कर भू-भार उतारूँगा। ये सुन देव-गण हर्षित हो अपने अपने स्थानों को लौट गये।

इधर जब कंस की बहिन देवकी सयानी भई तब कंस ने अपनी बहिन का विवाह वसुदेव के साथ कर दिया। जब कंस बहिन को भेजने चला तब आकाशवाणी भई कि रे कंस! तू जिस देवकी को भेजने साथ जा रहा है उसी का आठवाँ पुत्र तेरा काल होगा। यह सुन कंस नंगी तलवार ले बहिन को मारने चला तब वसुदेव ने समझाया और हर पुत्र के दे देने का वचन दे देवकी को मारे जाने से बचाया। कंस ने वसुदेव देवकी को कारागार में डाल पहरुये बिठा दिये। इस प्रकार कारागार में रहते हुए जो पुत्र उत्पन्न हुआ वह कंस के पास पहुँचाया गया। आठवीं बार स्वयं जगदाधार गुणागार अनुकम्पा-भाण्डार देवाधिदेव भगवान ने ही जन्म लिया और शंख, चक्र, गदा, पद्म विभूषित रूप दिखा

अपने को गोकुल पहुँचाने तथा गोकुल से यशोदा की लड़की ले आने का आदेश दिया। वसुदेव जी ने ऐसा ही किया। यह चरित्र किसी ने न जाना। कंस इस जन्म का समाचार पाकर तलवार ले आया परन्तु पुत्र के स्थान में पुत्री को पाया। जब पुत्री को मारना चाहा तो वह हाथ से छूट आकाश में चली गई और कहते गई कि मेरे मारने से क्या लाभ, तेरा मारने वाला तो व्रज में पैदा हो चुका। अब कंस को बड़ी चिन्ता हुई तो उसने पूतना आदि अनेक असुरों को भेज कृष्णचन्द्र जी को मरवा डालना चाहा परन्तु वह सब क्रम क्रम से कृष्णचन्द्र जी के हाथ से मारे गये। अन्त में कृष्णचन्द्र जी के हाथ से कंस भी मारा गया। जरासंध के अत्याचार से प्रजा की रक्षा करने के लिये श्री कृष्णचन्द्रजी मथुरा छोड़ द्वारकापुरी में जा बसे और क्रम २ से भूभार हरने लगे। कौरवों पांडवों के युद्ध में जगतपति कृष्ण अर्जुन के सारथी बने और पांडवों को विजय दिलवाई। द्वापर के अन्त में अपनी ही लीला द्वारा परमधाम को सिधारे।

लीला पुरुषोत्तम कृष्णचन्द्रजी की बड़ी बड़ी लीलायें ये हैं:—

१—नन्हें बालक होते हुए भी पूतना सी घोर राक्षसी के प्राण लेना।

२—बाल अवस्था में अघासुर, बकासुर सकटासुर आदि मायावी राक्षसों का वध करना।

३—गोवर्द्धन पर्वत को उँगली पर उठा इन्द्र के कोप से घोर वृष्टि में व्रज की रक्षा करना।

४—मतवाले हाथी व नामी नामी पहलवानों को मार महाबली कंस को बाल अवस्था ही में मारना।

५—जरासंध को पराजित करना, महाबली राक्षस कालयवन को नाश करना।

६—मथुरा को छोड़ द्वारकापुरी में बसना। ऐसा प्रजा के कष्ट-निवारणार्थ किया।

७—पांडवों को सहायता दे युद्ध में विजय दिलवाना।

८—सुदामा को रंक से राव करना।

९—राक्षसों को मार भूभार उतारना।

१०—गौत्रों से भक्ति व उनका पालन।

बलराम जी

बसुदेव जी की दूसरी स्त्री का नाम रोहिणी था। रोहिणी के उदर से बलदेव जी पैदा हुए जो बलराम व बलदाऊ जी कहलाते हैं।

कंस के भय से यह भी गोकुल पहुँचा दिये गये थे इन्होंने राक्षसों के मारने तथा कंस का नाश करने में श्री कृष्णचन्द्रजी को असीम सहायता पहुँचाई। बलराम जी महा बलवान थे, हल मूसल इनके हथियार थे। अन्त तक कृष्णचन्द्रजी के साथी रहे। कौरवों पांडवों के युद्ध के समय तीर्थ-यात्रा में गये थे। एक बार कुपित हो यमुना को हल द्वारा खींच उनका मार्ग ही टेढ़ा कर दिया वहाँ आज तक यमुना जी टेढ़ी बही हैं। इनकी यादगार में नीचे के पद्य याद रखिये :—

(प्रार्थना नं० १)

लाज रख लीजै सर्वाधार।
आश्रय लेकर नाथ आपका उठा लिया यह भार॥
नदिया गहरी नाव पुरानी अटक रही मँझधार।
सुमिर पुरानी टेक दयानिधि कर दीजै अब पार॥
जब जब भीर पड़ी भक्तन पै तब तब लिये उबार।
यही भरोसो है प्रभु मोकों रक्षक नन्दकुमार॥

नहिं विद्या नहिं ज्ञान शक्ति कुछ, नहिं कविता अधिकार।
जानत नाहिं लिखन बोलन हूँ, मूरख निपट गँवार॥

(प्रार्थना नं० २)

चरणों में आप ही के निकलेगी जान मेरी।
मिट्टी लगे ठिकाने करुणानिधान मेरी॥
अमृत है नाम तेरा जिसने पिया अमर हो।
अब तक न उस मज़े को समझी ज़बान मेरी॥
भगवन् तू यह समझना मैं दूसरा सुदामा।
बिगड़ी हुई दशा है उसके समान मेरी॥
दुखियों की नाथ तुम ही फ़रियाद ना सुनोगे।
तो दूसरा सुनेगा क्या दास्तान मेरी॥

ओ३म्

महाभारत का प्रारम्भ

नारायणं नमस्कृत्यं नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ॥

श्रीव्यास जी कृत महाभारत ग्रंथ पाँचवाँ वेद करके विख्यात है। साहित्यसेवी प्रत्येक पुरुष का कर्त्तव्य है कि ऐसे उत्तम ग्रंथ का अध्ययन अवश्य करे। यह ग्रन्थ विशाल है, सभी श्रेणी के लोग इससे समुचित लाभ नहीं उठा सकते। यह विचार कर इसका सूक्ष्म वर्णन पाठकों के लाभार्थ प्रकाशित कराया जाता है। चूँकि सागर को गागर में लाना है इसलिये मुख्य २ पुरुष तथा स्त्रियों की संक्षेप सूची प्रारम्भ में दी जा रही है।

१—अंगारमती—महारानी, विख्यात वीर दुर्योधन के परम प्रिय सखा कर्ण की रानी थीं और पति में अनुरक्त व धर्म-पथ-गामिनी थीं।

२—उलूपी—शेष जी की पोती व अर्जुन की पत्नी थीं। अश्वमेध यज्ञ के समय मणिपुर-नरेश अर्जुन के पुत्र बभ्रुवाहन ने अर्जुन को मार डाला तब अर्जुन की पत्नी तथा बभ्रुवाहन की माता उलूपी ने संजीवनी मणि द्वारा अर्जुन को जिला दिया।

३—अभिमन्यु—श्रीकृष्णचन्द्र जी की बहिन सुभद्रा इनकी माता थीं तथा अर्जुन पिता थे। इन्होंने युद्ध में अलौकिक युद्ध किया था तथा वीर गति प्राप्त कर अपना नाम अमर किया। इस वीर का नाम स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाने योग्य है। इनका वर्णन आगे दिया गया है।

४—अलम्बुष—पिता दुर्योधन माता राक्षसी थी। युद्ध समय घोर करके मारा गया।

५—उत्तर कुँवर—विराट राजा के पुत्र थे, जब कौरवों ने विराट नगरी पर चढ़ाई की तब इन्होंने अर्जुन को अपना सारथी बनाया परन्तु जब कौरवी सेना को देखा, रथ छोड़ कर भागे। अर्जुन ने दौड़ कर पकड़ा व रथ से बाँध दिया फिर उत्तर कुँवर को अपना सारथी बना अर्जुन ने कौरवी सेना को परास्त किया उत्तर कुँवर बड़े युद्ध में मारे गये।

६—अश्वत्थामा—द्रोणाचार्य्य के पुत्र थे, बड़े वीर तथा धनुर्धारी थे इनका विवरण अन्त में दिया गया है। इस नाम का हाथी भी था, जो बहुत बड़ा था, भीमसेन ने इस हाथी को मार कर 'अश्वत्थामा मारा गया' यह समाचार फैला दिया। द्रोणाचार्य्य ने सुना तब बहुत दुखी हुए। युधिष्ठिर से पूछा तो उन्होंने भी अश्वत्थामा के मारे जाने की बात कही। हाथी रूप में नहीं उनके पुत्र रूप में। तब गुरुजी दुखी होकर चिता पर भस्म होने बैठे मगर राजा द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न ने द्रोण का सिर काट लिया। अन्त में अश्वत्थामा के हाथों धृष्टद्युम्न का वध हुआ।

७—अरुन्धती—सूर्यवंश, कुल गुरु स्वनाम धन्य वशिष्ठ जी की पत्नी बड़ी ही पतिव्रता थीं। विवाह के समय नव दम्पति को इस जोड़ी का स्मरण कराया जाता है।

८—उत्तंग ऋषि—एक तपोधनी महात्मा थे।

९—अर्जुन—इनका वर्णन आगे दिया गया है।

१०—उलूक—आपस में निपटारा कराने के लिये दुर्योधन ने दूत बना कर भेजा, ये भी बड़ा वीर योद्धा था। शकुनि का पुत्र था।

११—अम्बा—यह काशी-नरेश की बड़ी कन्या थी। भीष्म जी स्वयम्वर में तीनों बहिनों को हर लाये। बड़ी कन्या अम्बा

शाल्वराज से विवाह करना चाहती थी। जब इसने भीष्म जी से अपना अभिप्राय प्रकट किया तो भीष्म जी ने इसे शाल्वराज के पास भेजा। उन्होंने स्वीकार नहीं किया तब इसने भीष्म जी से अपने साथ विवाह करने को कहा वह प्रण के कारण सहमत न हुए, तब अम्बा ने परशुराम जी की शरण ली। अम्बा के पीछे परशुराम जी व भीष्म जी में घोर युद्ध हुआ। परशुराम जी निराश हो लौटे। अन्त में अम्बा तपस्या कर अग्नि में जल मरी और भीष्म जी के मारने का वरदान ले लिया। यही शिखंडी हो कर जन्मी और इसी के कारण भीष्म जी का वध हुआ।

१२—अम्बिका—यह अम्बा की बहिन थी। भीष्म द्वारा स्वयंवर में हरी जाकर विचित्रवीर्य्य को ब्याही गई। जब राजा विचित्रवीर्य्य निस्सन्तान मर गये तब सास की प्रेरणा से नियोग द्वारा व्यास जी से धृतराष्ट्र नामी पुत्र उत्पन्न किया चूँकि इसने व्यास जी का रूप देख भय के मारे आँखें बन्द कर ली थीं इसीलिये धृतराष्ट्र जन्म के अंधे थे।

१३—अम्बालिका— अम्बा की सबसे छोटी बहिन थी। भीष्म द्वारा स्वयंवर में हरी जाकर विचित्रवीर्य्य से ब्याही गई। इसने भी सास की प्रेरणा से नियोग द्वारा व्यासजी से पाण्डु नाम का पुत्र उत्पन्न किया चूँकि व्यास जी का रूप देख भय के मारे इसका शरीर पीला पड़ गया इसीसे पुत्र भी पाण्डु रंग का हुआ और उसका नाम पाण्डु पड़ा।

१४—ऊषा—यह वाणासुर की कन्या थी। इसने स्वप्न में अनिरुद्ध को देखा। मोहित हो माया द्वारा इन्हें अपने यहाँ उठवा मँगाया। दोनों प्रेमपूर्वक रहे। अन्त में पिता ने जाना, इनको मारना चाहा परन्तु युद्ध में पिता को पराजित होना पड़ा। अन्त में दोनों का सांगोपांग विवाह हुआ।

१५—अनिरुद्ध—श्रीकृष्णचन्द्र जी के नाती तथा प्रद्युम्न के पुत्र थे। बड़े ही स्वरूपवान तथा वीर थे। शत्रुपुरी में निर्भय थे। ऊषा ने इनको उठवा मँगाया। दोनों का विवाह हो गया। ऊषास्वप्न व चरित्र प्रसिद्ध है।

१६—अनुशल्यादित्य—पूजन यज्ञ के समय धर्म पुत्र की स्त्रियों को हर ले गया और हार कर मित्रता पैदा की।

१७—उद्दालक मुनि—इन्होंने द्रोणाचार्य्य को श्राप दिया था कि जिस प्रकार पुत्र शोक में मेरे प्राण जा रहे हैं उसी प्रकार तुम्हारे भी प्राण पुत्र के शोक में जायँगे। द्रोणाचार्य्य के पुत्र ने उद्दालक मुनि के पुत्र को खेल में मारा था।

१८—बाहुक—गुप्त वास के समय बाहुक नाम नकुल का था।

१९—वासुकी—सर्प का नाम था। इसने भीम को बहुत से जवाहिरात दिये थे।

२०—विदुर—यमराज ने श्रापवश दासी के गर्भ से जन्म लिया। यह नियोग द्वारा व्यास जी के तथा दासी के संयोग से जन्मे। बड़े ही बुद्धिमान, नीति-चतुर व धर्मात्मा थे। हृदय से पांडवों के शुभचिन्तक थे—श्रीकृष्णचन्द्र जी ने दूतत्व के समय दुर्योधन की सेवा मेवा छोड़ कर इनका शाक खाया। इन्हीं के कारण पांडव लाक्ष-भवन में जलने से बचे।

२१—बाहुलीक—मामा की गद्दी पर बैठे। बड़े ही वीर योद्धा थे।

२२—भानुमती—दुर्योधन की रानी थी। नाम विख्यात है।

२३—भगदत्त—यह प्रसिद्ध योद्धा थे। हाथियों की भारी सेना ले दुर्योधन के सहायक हुए। इनका हाथी बहुत बड़ा था। यह मय हाथी अर्जुन के द्वारा मारे गये।

२४—वभ्रुवाहन—अर्जुन का पुत्र था। माता चित्रांगदा थी परन्तु उलूपी ने पुत्रवत् इसे पाला था। यह बड़ा वीर योद्धा

था। इसने मणिपुर का राज्य पाया। इन्हीं के हाथों अर्जुन मारे गये। पीछे उलूपी ने जिलाया।

२५—वृहन्नला—गुप्तवास के समय अर्जुन ने अपना नाम वृहन्नला रक्खा था और विराट राज-कन्या को नृत्य आदि की शिक्षा दी थी।

२६—वीरवर्म्म—सरस्वती नगरी के राजा थे। जिनकी कन्या की शादी यमराज से हुई थी। इनसे व अर्जुन से युद्ध हुआ जब कि वह अश्वमेध यज्ञ के घोड़े के रक्षक थे।

२७—भारद्वाज जी—इन्हीं के पुत्र द्रोणाचार्य थे।

२८—भद्रावती—एक नगरी का नाम जहाँ के राजा यौवनास्य थे।

२६—वृषकेतु—कर्ण के पुत्र थे। वीर और पितृ-भक्त थे।

३०—भूरिश्रवा—इसका वर्णन आगे दिया गया है।

३१—वशिष्ठजी—धर्म्म पुत्र आदि के स्नानार्थ जल लाये, साथ में इनकी पत्नी भी थीं। यह महर्षि ब्रह्मज्ञानी तथा त्रिकालदर्शी थे। नन्दिनी नाम की गौ इनके पास थी। इसी के पीछे इनमें व विश्वामित्र में लड़ाई हुई परन्तु वशिष्ठ जी ने गौ नहीं दी। यह तपोधनी ऋषि थे।

३२—विचित्रवीर्य्य—पिता राजा शान्तनु तथा माता सत्यवती थीं, अपने बड़े भाई के मरने पर गद्दी पर बैठे। इनके अम्बिका व अम्बालिका नाम की दो रानियाँ थीं। ७ वर्ष राज्य करके राजयक्ष्मा रोग से मरे।

३३—विराट—इनके यहाँ पांडव अपना २ नाम बदल कर द्रौपदी सहित १ वर्ष गुप्त रूप से रहे कि कौरव न जान पावें। जुआ के खेल में १२ वर्ष के वनवास व १ वर्ष के गुप्तवास की प्रतिज्ञा थी। राजा विराट के शङ्ख व उत्तर कुँवर नाम के दो पुत्र तथा उत्तरा कुँवरि नाम की कन्या थी। यह कन्या अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु को विवाही गई। शङ्ख

महाभारत के युद्ध में पांडवों की ओर से युद्ध करके वीरगति को प्राप्त हुए।

३४—बृषसेन—यह अर्जुन की ओर से युद्ध में लड़े थे।

३५—चक्रव्यूह—कमल के आकार में सेना को खड़ा करना। सेना को इस प्रकार से खड़ा करना प्रद्युम्न, अर्जुन तथा द्रोणाचार्य्य ही जानते थे द्रोणाचार्य्यजी ने अपने सेनापतित्व में इसे रचा। इसी में फँसकर अभिमन्यु की जान गई।

३६—भीष्मक—विदर्भ देश के राजा थे। इनकी कन्या दमयन्ती बहुत सुन्दरी थी। उससे विवाह करने की इच्छा इन्द्र, वरुण, कुबेर तथा अग्नि को भी पैदा हुई परन्तु विवाह राजा नल से हुआ। हंस के द्वारा स्वयम्वर से पहिले ही राजा नल व दमयन्ती एक दूसरे में प्रेम करने लगे थे।

३७—विश्वामित्र—गाधिराज के पुत्र थे। जब यह अनेक उपाय करके भी वशिष्ठ जी से नन्दिनी गौ न ले सके तब वशिष्ठ जी के तेज को देख वन में तपस्या करने चले गये वहीं पर इन्द्र की भेजी अप्सरा से व इनके संयोग से शकुन्तला नाम की अति सुन्दरी कन्या हुई। जिसको कण्व ऋषि ने पाला जो दुष्यन्त को व्याही गई। इसके पीछे विश्वामित्र ने बड़ा घोर तप किया। राम व लक्ष्मण को अपने यज्ञ की रक्षा को ले गये थे। ये भी बड़े नामी महर्षि हो गये हैं।

३८—बुद्धिचक्र—धृतराष्ट्र नाम का था।

३९—वकडालव—इसका वर्णन आगे दिया गया है।

४०—भद्रावती—बृषकेतु राजा की रानी थीं। जब राजा बृषकेतु धर्मपुत्र के यज्ञ के लिये जल लाये, यह भी साथ में थीं।

४१—पांडु—काशी-नरेश की कन्या अम्बालिका के गर्भ तथा व्यास जी के संयोग से पैदा हुए। इनकी कुन्ती व माद्री नाम

की दो रानियाँ थीं। यही युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव के पिता थे।

४२—प्रद्युम्न—पिता श्री कृष्णचन्द्रजी व माता रुक्मिणी जी थीं। बड़े ही रूपवान, वीर, धर्म के ज्ञाता, नीति-चतुर और युद्ध-कुशल थे यज्ञ के घोड़े की रक्षा में अर्जुन के साथ थे। मनीपुर में इनकी व अर्जुन की एक दशा रही।

४३—पाराशरी—विदुर जी की पत्नी थीं।

४४—पुण्डरीक—मनीपुर के राजा बभ्रुवाहन का मंत्री था अर्जुन को जिलाने में सहायता दी।

४५—परीक्षित—पिता अभिमन्यु थे। उत्तरा कुँवरि के गर्भ से जन्मे। वीर, धीर, प्रजावत्सल और नीतिपरायण राजा थे। कलियुग के फेर में पड़ कर शृंगी ऋषि के श्राप द्वारा तक्षक साँप के द्वारा डसे गये तथा मृत्यु को प्राप्त हुए।

४६—पारिषद—राजा द्रुपद के पिता थे।

४७—प्रभावती—यह प्रद्युम्नजी की पत्नी थीं। जब प्रद्युम्नजी धर्म-पुत्र के यज्ञ के लिये जल लाये, तब यह भी उनके साथ थीं।

४८—परशुराम—यह यमदग्नि ऋषि के पुत्र थे। जन्मते ही तपस्या के हेतु वन को चले गये। जब राजा सहस्रबाहु ने यमदग्नि जी को पीड़ित किया तब उन्होंने परशुराम को स्मरण किया। परशुराम जी शीघ्र ही आये और सहस्रबाहु से युद्ध कर उसे युद्ध में मार डाला और उसी समय प्रतिज्ञा की कि मैं पिता की यातना के बदले में इस पृथ्वी को २१ बार क्षत्रियों से रहित कर दूँगा और उन्होंने ऐसा ही किया। यह धनुर्विद्या के आचार्य्य थे। महादेव जी ने इनको यह शिक्षा दी थी। भीष्म तथा कर्ण को बाण विद्या इन्होंने सिखाई। अम्बा के पीछे भीष्म व इनमें घोर युद्ध हुआ। उसमें यह पराजित हुए, तब इन्होंने प्रतिज्ञा की कि अब किसी क्षत्री को बाण-विद्या न सिखाऊँगा

कर्ण ने धोखा देकर विद्या पढ़ी। जब परशुराम जी को पता चला तब उन्होंने कर्ण को श्राप दिया। रामचन्द्र जी ने जब शिव जी के धनुष को तोड़ा तब इनमें तथा रामचन्द्र जी में बड़ा वाद-विवाद हुआ। अन्त में यह अपना धनुष श्री रामचन्द्र जी को दे वन में तपस्या करने गये। जब द्वापर में भीष्म तथा कर्ण हुए, तब यह वन में पहुँचे और परशुराम जी से बाण-विद्या सीखी—इनके बारे में तुलसीदास जी ने लिखा है किः—

तेहि अवसर सुनि शिव-धनु-भंगा।
आये भृगुकुल कमल पतंगा ॥ १ ॥
देखि महीप सकल सकुचाने।
बाज झपट जनु लवा लुकाने ॥ २ ॥
गौर शरीर भूति भल भ्राजा।
भाल विशाल त्रिपुण्ड विराजा ॥ ३ ॥
कटि मुनि बसन तून दुइ बाँधे।
धनुसर कर कुठार कल काँधे ॥ ४ ॥
शोभा सींव सुभग अति वीरा।
मनहुँ वीर रस धरे शरीरा ॥ ५ ॥
भली भाँति पितु आज्ञा राखी।
मारी मातु लोक सब साखी ॥ ६ ॥
पितहिं रिझाय लीन्ह बरदाना।
मातु दिवायो जीवन-दाना ॥ ७ ॥
मातु पिता ऋण पूर्ण चुकायो।
गुरु ऋण काज विवाद मचायो ॥८॥
हे प्रभु! महिमा अमित तिहारी।
हो भारत मुख उज्ज्वलकारी ॥ ९ ॥

४९—ताम्रध्वज—मोरध्वज के पुत्र थे। इन्होंने अश्वमेध यज्ञ के

घोड़े की रक्षा करते हुए अर्जुन को युद्ध में हरा दिया जब श्रीकृष्णजी ने सहायता की तब विजय अर्जुन को मिली।

५०—जयन्त या वल्लभ—भीमसेन ने गुप्तवास के समय अपना नाम रक्खा था।

५१—जयद्रथ—दुर्योधन की बहिन दुश्शला के पति तथा सिंध देश के राजा थे। पाँडवों के वनवास के समय में इसने द्रौपदी को हर कर अपने घर ले जाने की इच्छा की। ऐसा करते हुए यह लड़ाई में हार कर हरिद्वार पहुँचा। शिव जी को तपस्या द्वारा प्रसन्न किया। शिव जी ने बरदान दिया कि तुम एक दिन अर्जुन को छोड़ शेष पांडवों को जीत लोगे। जब गुरु द्रोणाचार्य ने चक्र-व्यूह बनाया उस दिन द्वार पर जयद्रथ रहा। अर्जुन दूसरे स्थान पर युद्ध में उलझे हुए थे। अभिमन्यु चक्र-व्यूह में फँस मारा गया। उसी दिन जयद्रथ के मारे अन्य पाँडव भीतर न घुस सके। अभिमन्यु के मारे जाने पर अर्जुन को भारी शोक हुआ। अन्त में श्रीकृष्णजी की सहायता से अपार सेना का नाश कर घोर युद्ध करते हुए अर्जुन ने जयद्रथ को मार गिराया। अर्जुन ने जयद्रथ के मारने के लिये स्तुति द्वारा शिव जी को भी प्रसन्न किया। उन्होंने मारने की विधि बताई।

५२—जरादैत्य—वनवास के समय भीम को छोड़ शेष चार भाइयों को द्रोपदी सहित ले गया। अन्त में भीम के हाथ मारा गया।

५३—जनमेजय—राजा परीक्षित के पुत्र अभिमन्यु के नाती थे और अर्जुन के पन्ती थे। सर्पों से पिता का बदला चुकाने के लिये एक बड़ा सर्प-यज्ञ किया, जिसमें अगणित सर्प स्वाहा हो गये। अन्त में वासुकी नामक सर्प ने राजा को प्रसन्न कर यज्ञ बन्द करवा सर्पों की रक्षा की।

५४—तक्षक—यह सर्प इन्द्र का मित्र था। खांडव वन के दाह के

समय यह तीर्थ-यात्रा में गया था। इसके पुत्र अश्वसेन को इन्द्र ने बचा लिया परन्तु अश्वसेन की माँ पुत्र के बचाने में जल मरी। इसी से अभिमन्यु के पुत्र व अर्जुन के नाती परीक्षित को डस लिया जिससे वे मृत्यु को प्राप्त हुए।

५५—चित्रांगद—राजा शान्तनु के पुत्र थे। इनकी माता का नाम सत्यवती था। यह वीर व पराक्रमी राजा थे। यह गंधर्वों के साथ युद्ध करते हुए मारे गये।

५६—चन्द्रहास—एक नामी राजा हुए हैं। इनके माता-पिता इनके जन्म के पीछे मर गये। राज्य मंत्री, ने पाला मगर कुछ दिनों के पीछे मंत्री राज्य के लोभ में फँस गया और उसके जी में चन्द्रहास के मारने की धुनि समाई। उसने चन्द्रहास को अपने राज्य की देख-भाल कर आने की राय दी। भोले-भाले चन्द्रहास ने राय मान ली और साज-सामान सहित राज्य पर्य्यटन को चल दिया। चलते समय मंत्री ने अपने पुत्र मदन के नाम एक गुप्त पत्र दिया उसने लिखा कि:—

श्लोक—विषमस्मै प्रदातव्यं मदन त्वया शत्रवे।
कार्य्याकार्य्ये न कर्त्तव्यं कर्त्तव्यं किल मम प्रियम्॥

इसका प्रयोजन यह कि चन्द्रहास आते हैं तुम इन्हें विष खिला कर मार डालना मगर—

दोहा—जाको राखै साइयाँ मार न सकिहैं कोय।
बाल न बाँका करि सकै, जो जग बैरी होय॥

सफ़र का मारा चन्द्रहास मदन की बगिया में जा घोड़ा बाँध सो रहा। इतने में मंत्री की कन्या मदन की बहिन विषया आई वह चन्द्रहास को देख मोहित हो गई। उसने सोते हुए चन्द्रहास की पगड़ी में गाँठ देख उसे खोल चिट्ठी को पढ़ा। पिता के अभिप्राय को समझ दुखित हुई और एक तिनका उठा आँख के काजल में घिस चिट्ठी के श्लोक में विष के आगे 'या' बढ़ा दिया अब विष

की जगह विषया देना हो गया उसने चिट्ठी ज्या की त्यों बाँध दी और घर चली गई। इस चिट्ठी को पढ़ मदन ने अपनी बहिन विषया का विवाह चन्द्रहास से कर दिया। मंत्री ने जब यह सुना, बड़ा दुखी हुआ। फिर दोबारा देवी के मंदिर में भेज क़त्ल कराना चाहा मगर मदन जा फँसा और क़त्ल हो गया। पीछे से चन्द्रहास पहुँचा, स्तुति द्वारा देवी को प्रसन्न कर मदन को जीवदान दिलाया। मंत्री ने लज्जित हो राज्य चन्द्रहास को दिया और आप वन को गया। चन्द्रहास ने मदन को मंत्री बनाया।

५७—धनञ्जय—अर्जुन के दश नामों में से एक नाम था।

५८—धौम्य—पांडवों के पुरोहित थे। बराबर पांडवों के साथ रहे।

५९—द्रौपदी—इसका वर्णन आगे दिया गया है।

६०—द्रौणी—यह द्रोणाचार्य के पुत्र थे। इनका नाम अश्वत्थामा था। यह बड़े वीर और धनुर्वेद के ज्ञाता थे।

६१—द्रोणाचार्य्य—इसका वर्णन आगे दिया गया है।

६२—धृतराष्ट्र—इनके जन्म का हाल अम्बिका के साथ पढ़िये। इनके १०० पुत्र थे तथा १ कन्या थी। पुत्र कौरव कहलाये। सब में बड़ा दुर्योधन था यह पुत्रों के मोह में फँस गये उसीके कारण युद्ध हुआ।

६३—दुःशासन—इसका वर्णन आगे दिया गया है।

६४—राजा द्रुपद—पांचाल देश के राजा थे। धृष्टद्युम्न, शिखंडी नाम के दो पुत्र व द्रोपदी नाम की कन्या इन्हीं की थी। द्रोणाचार्य व राजा द्रुपद अस्त्र विद्या के सहपाठी थे। द्रुपद का राज्य किरातों ने छीन लिया था। द्रुपद ने द्रोणाचार्य जी से कहा कि आप हमारा राज्य दिलवा दें तो मैं आधा राज्य आपको दे दूँगा। द्रोणाचार्य ने किरातों को हरा कर राज्य दिलवा दिया। कुछ दिन पीछे जब द्रोणाचार्य अपना भाग

माँगने गये तब द्रुपद ने इनका अपमान किया। अर्जुन जा कर द्रुपद को पकड़ लाये मगर द्रोणाचार्य ने दया करके छोड़ दिया। बड़े युद्ध में यह द्रोणाचार्य के हाथ से मारे गये। इन के पुत्र धृष्टद्युम्न ने द्रोणाचार्य को मारा।

५५—दमयन्ती—विदर्भ देश के राजा भीष्मक की कन्या थीं। यह अत्यन्त सुन्दरी थीं यहाँ तक कि देवतागण भी इनके साथ विवाह करने की इच्छा किये हुए थे परन्तु इन्होंने सब को छोड़ नल से विवाह किया। जब राजा नल अपने भाई के साथ जुआ के खेल में हार गये तब भाई ने इनको निकाल दिया, तब इन्होंने बहुत दुःख सहे। आल्हा छंद में कहा गया है कि :—

(वीर छंद)

विपदा पड़ गई राजा नल पै खूँटी निगलो नौलखा हार।

इन्होंने इसी दुख के मारे एक दिन सोती हुई दमयन्ती को छोड़ दिया और आप जा कर अयोध्या के राजा के सारथी बने। इधर दमयन्ती भटकते २ अपने मायके पहुँची। वहाँ से उसने राजा नल को ढुँढ़वाया और बुलवा लिया। दोनों के दिन फिर फिरे। राज्य वापिस मिला। दमयन्ती सच्ची पतिव्रता थीं। दमयन्ती का व्रत यह था:—

बिना पति सूना सब संसार।

पति ही व्रत है, पति ही तप है, पति ही है करतार।
पति ही से पत है इस तन की, पति पतराखनहार॥
जब लों पति है तब लों पत है, बिन पति विपति हज़ार।
जिसका नेह चरण में पति के, वही पतिव्रता नार॥
एक पतिव्रत रहे जगत में, तो सब व्रत निःसार।
बिना पतिव्रत के नारी का, जीवन है धिक्कार।

६६—दुष्यन्त—दादा बुध, पिता पुरुरवा, माता उर्वशी,

शकुन्तला से विवाह हुआ इन्हीं के पुत्र भरत के नाम पर यह देश भारत कहलाया। शकुन्तला नाटक में इनका पूरा पूरा वर्णन है।

६७—द्वारावती—द्वारिका जी का नाम है।

६८—दुर्मुख—दुर्योधन के भाई का नाम है।

६९—देवासु—वह देश जहाँ भीम का फेंका हुआ द्रोणाचार्य का रथ ३०० कोस पर जा गिरा था—

७०—रुक्म—श्री कृष्णचन्द्रजी की पटरानी रुक्मिणी जी का भाई था। यह बड़ा अभिमानी था इसीलिये किसी पक्ष में नहीं रहा।

७१—साम्ब—इसका वर्णन आगे दिया गया है।

७२—सूर्य्य—इनके पिता का नाम कश्यप और माता का अदिति था।

७३—सोमदत्त—इसका वर्णन आगे दिया गया है।

७४—सैरन्ध्री—द्रौपदी ने गुप्त वास के समय अपना नाम सैरन्ध्री रक्खा था।

७५—सुधन्वा—हंसध्वज राजा के पुत्र थे। इनसे तथा अर्जुन से यज्ञ के घोड़े के कारण युद्ध हुआ। कृष्णचन्द्र जी सहायता को आये, तब अर्जुन विजयी हुए।

७६—शान्तनु—गंगा जी इनकी पत्नी बनीं—भीष्मजी इन्हीं के लड़के थे, जो गंगा जी के गर्भ से जन्मे। राजा शान्तनु की दूसरी स्त्री सत्यवती से चित्रांगद व विचित्रवीर्य्य हुए। दोनों निस्संतान मरे। व्यास जी से नियोग द्वारा पुत्रोत्पत्ति कराई गई तब आगे वंश चला।

७७—सुभद्रा—कृष्णचन्द्रजी की बहिन थीं। अर्जुन के साथ विवाह हुआ। अभिमन्यु इन्हीं के उदर से जन्मे।

७८—सुबल—यह शकुनि का भाई था। पांडवों को वापस लाया और उनको दोबारा जुआ के खेल में शामिल कराकर तथा हरवा कर गुप्त वनवास की प्रतिज्ञा करवाई।

७६—शंख—यह राजा विराट के पुत्र थे। महायुद्ध में द्रोणाचार्य्य के हाथों मारे गये।

८०—सुरथ—जयद्रथ के पिता थे और सिंध देश के राजा थे। इन्होंने शिवजी की तपस्या करके व शिवजी को प्रसन्न करके पुत्र माँगा और उसका अमर होना चाहा। शिवजी ने कहा कि तुम्हारे पुत्र होगा और जो उसका सिर पृथ्वी पर गिरावेगा और उसे ताकेगा वह मृत्यु को प्राप्त होगा। जब अर्जुन ने जयद्रथ को मारा, उस समय सुरथ पुत्र के कल्याण के लिये तप में लगे थे। कृष्णचन्द्रजी की आज्ञानुसार अर्जुन ने जयद्रथ का सिर सुरथ के हाथों में गिराया इन्होंने बिना देखे उसे पृथ्वी पर गिरा दिया जैसे ही उसे देखा स्वयं भी मृत्यु को प्राप्त हुए।

८१—शूरसेन—श्रीकृष्णचन्द्रजी के नाना थे। युद्ध में ग्यारहवें दिन मारे गये।

८२—सात्यकी—यह श्रीष्कृष्णचन्द्रजी के सारथी थे। अर्जुन ने इनको धनुर्विद्या सिखलाई थी। यदुवंशियों के परस्पर के विग्रह में इनके प्राण गये। कृतवर्मा के हाथ से यह मारे गये।

८३—संजय—यह धृतराष्ट्र के मंत्री थे।

८४—सहदेव—इनका वर्णन आगे दिया गया है।

८५—सहदेव—जरासन्ध के पुत्र थे। युद्ध में अर्जुन के हाथ मारे गये।

८६—शल्य—यह माद्री के भाई और नकुल व सहदेव के मामा थे। इसी नाते अन्य तीन पांडवों के भी मामा थे।

८७—शकुनि—यह दुर्योधन के मामा थे। जुआ खेलने में यह बहुत होशियार थे।

८८—शकुन्तला—इनके पिता विश्वामित्र थे तथा माता मेनका अप्सरा थी। माँ इसे छोड़ चली गई। कण्व ऋषि ने पाला। दुष्यन्त से इनका विवाह हुआ।
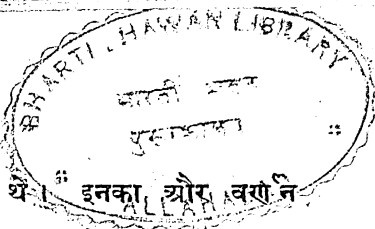
८९—सुशर्म्मा—यह दुर्योधन के पक्ष के थे। इनका और वर्णन आगे दिया गया है।

९०—शिशुपाल—यह कृष्णचन्द्रजी के फुफेरे भाई थे। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में इन्होंने कृष्णचन्द्र जी को अनेक अपशब्द कहे। अंत में कृष्णचन्द्र जी ने सुदर्शन चक्र द्वारा इनका सिर काट लिया। कृष्णचन्द्र जी ने इन्हें १०० अपराध क्षमा करने पर मारा। श्री कृष्णचन्द्र जो इनकी माता को बचन दे चुके थे जिसकी कथा आगे दी गई है

९१—शिखंडी—यह राजा द्रुपद का पुत्र था। अम्बा ने शिखंडी का अवतार लिया। इसको सामने देख भीष्म जी ने हथियार डाल दिये और अर्जुन के बाणों द्वारा घायल हो पृथ्वी पर गिरे, शिखंडी युद्ध के अन्त में दुर्योधन के हाथों मारा गया।

९२—कुन्ती—इनकी गिनती ५ कन्याओं में है। यह कृष्णचन्द्र जी की फूफी थीं। यह राजा पांडु को ब्याही गई थीं। इनको छोटे-पन में दुर्वासा जी ने एक आकर्षण मंत्र सिखाया था कि जिस देवता का ध्यान करके मंत्र पढ़ोगी उसी देवता को पाओगी। इसी मंत्र द्वारा सूर्य्य का आवाहन करके कर्ण की उत्पत्ति की गई। चूँकि ये कुँवारी थीं इसलिये लोक-लज्जा के कारण कर्ण को बहा दिया, सारथी ने इनको जल से निकाल कर पाला। उसी मंत्र के द्वारा कुन्ती ने धर्मराज से युधिष्ठिर, इन्द्र से अर्जुन व वायु से भीम की उत्पत्ति की। ऐसा करने में पति की भी राय थी, क्योंकि वह श्रापवश रानियों से संयोग नहीं कर सकते थे, लड़कपन में कम-समझी से व जवानी में पति की आज्ञा से पुत्रोत्पत्ति करने में लोगों ने इन्हें बुरा नहीं समझा।

९३—कर्ण—यह कुन्ती के कुँवारेपन में सूर्य्य के संयोग से हुए। यह जल में बहा दिये गये। सारथी द्वारा पाले गये। परशुराम

से धनुर्वेद पढ़ा। बड़े ही दानी थे। पाँच बाण कुन्ती को व कवच कुण्डल इन्द्र को दे अपनी मौत आप बुलाई। अर्जुन के हाथों मारे गये। दुर्योधन ने इनको राज्य का एक भाग देकर अपनी ओर कर लिया था।

९४—कुन्तलपुर—यहाँ के राजा ने प्रथम तीन वर्षों में चन्द्रहास को पाला था।

९५—कलिन्द—इनका राज्य चन्द्रहास को मिला, इसी राज्य के मंत्री ने राज्य के लोभ से इनको मारना चाहा मगर मार न सका।

९६—कृपाचार्य—अश्वत्थामा के मामा व द्रोणाचार्य के साले थे, गौतम ऋषि के पुत्र थे। धनुर्वेद के आचार्य व वीर थे। युद्ध में दुर्योधन की ओर थे। मारे जाने से बच गये।

९७—कृतवर्मा—यदुवंशी थे। दुर्योधन की ओर से लड़े। युद्ध में मारे जाने से बचे। शेष वर्णन आगे पढ़िये।

९८—कदलीवन—इन्द्र का बाग़ है। रखवारे कुबेर हैं। फूल सुगंधित व सुवर्ण के रंग के होते हैं।

९९—केक—गुप्तवास के समय युधिष्ठिर का नाम था।

१००—कामबोज—इनका वर्णन आगे दिया गया है।

१०१—कीचक—राजा विराट का साला था, बल में सिवाय भीमसेन के और कोई इससे न बढ़ा था। इसने द्रोपदी पर बुरी दृष्टि डाली। वह उस समय दासी के रूप में राजा विराट के यहाँ थीं। अन्त में भीमसेन ने रूप बदल इसको मय इसके ९९ भाइयों के मार डाला।

१०२—कुमुदावती—मोरध्वज की रानी थी। यह भी पति के साथ अपना बदन देने को तैयार थी।

१०३—कलिंगराज—इनका वर्णन आगे दिया गया है।

१०४—काम्यक—वन का नाम है। जहाँ वनवास के समय पांडव लोग सब से पहिले गये।

१०५—कपिध्वज—यह नाम अर्जुन का है क्योंकि इनके रथ की ध्वजा पर हनुमान जी बतौर रक्षक रहते थे।

१०६—गांधारी—इनके दुर्योधन आदि १०० पुत्र व एक कन्या थी। गांधारी के श्राप से यदुवंश का नाश हो गया।

१०७—गंगाधर—शिव जी का नाम है। युद्ध समाप्त होने पर पांडवी सेना के रक्षक रहे, परन्तु अश्वत्थामा की स्तुति पर प्रसन्न हो उसे छापा मारने की आज्ञा दे पांडवी सेना के शेष भाग को अश्वत्थामा द्वारा नाश करवा दिया।

१०८—घटोत्कच—माता हिडम्बी, पिता भीम, यह बड़ा वीर था। वनवास के समय पांडवों को कन्धे पर रख कर ले चलता था। महायुद्ध में कर्ण ने इन्द्र की दी हुई अमोघ शक्ति के द्वारा इसे मार गिराया। शेष आगे पढ़िये।

१०९—गुणमंजरी—यह नाग-कन्या थी। भीम पर आशिक़ हुई और भीम को अमृत पिला कर ज़िन्दा किया। गुण मंजरी के पिता करकोटक थे, जिनको गरुड़ ने अभयदान दिया। शेष हाल भीम के साथ देखिये।

११०—गांडीव धनुष—अग्नि ने अर्जुन को खांडव वन जलाने के बदले में यह धनुष दिया था।

१११—ज्ञान-चक्षु—यह नाम धृतराष्ट्र का है।

११२—लक्ष्मण—इसका वर्णन आगे दिया है।

११३—लक्ष्मी—विष्णु भगवान की पत्नी तथा धन की देवी हैं। व्यापारी लोगों के मुँह से लक्ष्मी जी सदा सहाय निकला करती हैं। सच पूछो तो इस कलियुग में इन्हीं का राज है। किसी ने कहा है कि—

माय कहे मेरा बेटा लागे।
बहिन कहै मेरा भैया।
घर की जोरू लेय बलैयाँ।
सब से बड़ा रुपैया॥

एक कहते हैं कि—

टका धर्म टका कर्म टकाहि परमं पदम्।
यस्य गृहे टका नास्ति हा टका टकटकायते॥

रहीमदास जी कहते हैं कि—

कमला थिर न रहीम कह, जानत हैं सब कोय।
पुरुष पुरातन की बधू, क्यों न चंचला होय॥

एक कहते हैं कि—

कनक कनक ते सौ गुनी, मादकता अधिकाय।
वह खाये बौरात है, यह पाये बौराय॥

एक कहते हैं कि—

राम रहीमा को कहै, नाम कृष्ण को लेय।
खरो रुपैया देखि कै, सुधि बुधि डालत खोय॥

गिरिधर कविराय कहते हैं कि—

दौलत पाय न कीजिये सपने में अभिमान।
चंचल जल दिन चार को ठाँव न रहत निदान॥
ठाँव न रहत निदान जियत जग में यश लीजै।
मीठे बचन सुनाय विनय सब ही की कीजै॥
कह गिरिधर कविराय अरे यह सब घट तौलत।
पाहुन निशि दिन चार रहत सब ही के दौलत॥

११४—मैथिल नाम गऊ—यह राजा विराट की गऊ थी। जब विराटपुरी पर कौरवों ने चढ़ाई का और गौओं को रोका तब इस गऊ ने कर्ण को श्राप दिया कि तुमने जिस प्रकार मुझे अशक्त बनाने का उद्योग किया युद्ध में उसी प्रकार

तुम्हारा रथ भी कीचड़ में फँस कर अशक्त होगा। आगे चल कर यही हुआ भी।

११५—मदन—कलिन्द के राजा के मंत्री के लड़के का नाम था, जिसका बयान चन्द्रहास के साथ आ चुका है।

११६—मान गोविन्द—दुर्योधन का एक नाम था।

११७—मोरध्वज—राजा का नाम है। इनकी कहानी सब के मुँह पर है श्रीकृष्णचन्द्रजी ने बूढ़े ब्राह्मण का रूप धर इनके सत्य की परीक्षा ली। इनसे कहा गया कि आधी देह आरे से काटी जावे। आधी देह कटाने को राजा तैयार थे। बाईं आँख से आँसू निकला तब श्रीकृष्णचन्द्रजी अप्रसन्न होकर जाने लगे तब उनसे कहा गया कि बाईं आँख को दुख है कि मैं काम में न आई इसलिये दुख हुआ। यह सुनकर श्री कृष्णचन्द्रजी ख़ुश हुए और कहा कि बरदान माँगो तब राजा ने बरदान माँगा कि कलियुग में ऐसी परीक्षा न की जावे।

११८—मेघवर्ण—भीमसेन का नाती व घटोत्कच का पुत्र था। अश्वमेध यज्ञ में घोड़ा लाये व फिर घोड़े की रक्षा में गये। मनीपुर में मारे गये फिर अमृत द्वारा जिये।

११९—माद्री—नकुल व सहदेव को माँ थीं। शल्य माद्री के भाई थे, माद्री अति रूपवती थी। एक दिन राजा व्रत ले थे मगर बाहर जाने के कारण देर से लौटे और शाम होने लगी। रात में भोजन करने का नियम नहीं था। माद्री ने देखा कि पति को भूखों मरना पड़ेगा तब पूरा शृंगार कर पहाड़ पर गईं और अस्ताचल की ओर जाते हुए सूर्य को अपने रूप तथा पतिव्रत के प्रभाव से इतनी देर रोका जितनी देर में राजा भोजनादि से निवृत हुए। माद्री के हटते ही सूर्य्य एक दम अस्ताचल को गये और रात काफ़ी हो गई। जब राजा पांडु को यह पता चला तो यह माद्री के प्रेम में डूब गये और

माद्री से विषय भोग करते हुए श्राप के मारे मर गये। राजा पांडु ने हिरण हिरणी के रूप में मुनि व मुनि-पत्नी को न समझ पाने के कारण भोग करते हुए मारा। उन्होंने मरते समय श्राप दिया कि तुम भी विषय भोग करते समय मरोगे।

१२०—नन्दिघोष—यह रथ अर्जुन को मय दानव की प्राण-रक्षा में मिला था। इसी पर चढ़ कर अर्जुन ने युद्ध किया था।

१२१—नहुष—ये यज्ञ करने के द्वारा इन्द्रासन को प्राप्त हुए तब इन्होंने इन्द्राणी को अपनाना चाहा। इन्द्राणी ने कहा कि यदि राजा नहुष पालकी में बैठ मुनियों को पालकी के बाँस में लगाकर आवें तो मैं उनकी रानी बनने को तैयार हूँ। काम-वश राजा ने पालकी में बैठ मुनियों को बाँस में लगा शीघ्र चलने को कहा तब मुनियों ने पालकी पटक राजा को साँप हो जाने का श्राप दिया। राजा श्राप-वश साँप होकर समय काटने लगा। यह वनवास के समय पानी की खोज में फिरते युधिष्ठिर के चारों भाइयों को निगल गया। भाई पानी तक न पहुँच पाये। अंत में युधिष्ठिर ने इसके प्रश्नों का उत्तर देकर अपने भाइयों का और राजा का उद्धार किया। जब पानी के पास भाई गये वहाँ एक श्राप के मारे यक्ष ने युधिष्ठिर के भाइयों का यही हाल किया उस का भी युधिष्ठिर ने उद्धार किया और भाइयों को बचाया।

तुलसीदास ने रामायण में लिखा है कि:—

गुरु श्रुति सम्मति धर्म फल, पाइय बिनहिं कलेस।
हठ वश सब संकट सहे, गालव नहुष नरेस॥

यह श्री रामचन्द्र जी ने सीता से कहा था।

१२२—नीलध्वज—इसकी कन्या की शादी अग्नि से हुई थी।

पहिले अर्जुन से युद्ध किया पीछे से मित्रता कर ली। अश्वमेध यज्ञ में मय पत्नी आये और जल लाये। इनकी पत्नी का नाम नन्दिनी या ज्वाला था।

१२३—नकुल—इसका वर्णन आगे दिया गया है।

१२४—नासिकेतु—उद्दालक ऋषि के पुत्र थे। बालपन ही में धर्म-राज की पुरी में गये और वहाँ का दृश्य देखकर लौटे।

१२५—नल—निषध देश के राजा थे। हंस के द्वारा इनमें व दमयन्ती में जान पहिचान हुई। बिना देखे एक दूसरे को दोनों चाहने लगे। जब दमयन्ती का स्वयम्बर हुआ। देवता लोग भी रूप बदल कर पहुँचे। देवताओं ने नल को दूत बना कर दमयन्ती के पास भेजा। मगर दमयन्ती ने किसी देवता की बात पर ध्यान नहीं दिया। दूसरे दिन सब देवता स्वयंवर में नल का रूप धर सभा में बैठे। अब दमयन्ती बहुत चकराई, मगर फूलों की माला द्वारा नल को पहिचान जयमाल डाली तब नल व दमयन्ती का विवाह हो गया। दमयन्ती के बयान में और हाल लिखा जा चुका है।

१२६—विकर्ण—दुर्योधन का सब से छोटा भाई था। विकर्ण मौक़े मौक़े पर दुर्योधन को समझाया करता था।

१२७—वैशम्पायन—व्यास जी के शिष्य थे। व्यास जी की आज्ञा से इन्होंने जनमेजय को महाभारत का इतिहास सुनाया।

१२८—व्यास जी—पिता पाराशर ऋषि व माता मत्स्योदरी थी। माता के कुँवारेपन में पैदा हुए। पैदा होते ही तप को चले गये और माँ से कह गये कि जब जब याद करोगी आ जाऊँगा। इनका हाल अम्बिका व अम्बालिका के साथ लिखा जा चुका है। ये भारतीय साहित्य में बहुत प्रसिद्ध हैं। अषाढ़ की पूर्णमासी को हर हिन्दू के घर में इनकी पूजा होती है। इनके बारे में कहा गया है कि—

शुभ सौम्य मूर्त्ति तेजोनिधान।
हो अन्य भानु ज्यों भासमान॥
ध्यानस्थ स्वस्थ सद्धर्म धाम।
भगवान व्यास तुमको प्रणाम॥
बुध जन समाज जिसका तमाम।
है रक्खे पंचम वेद नाम॥
इतिहास महाभारत पुनीत।
सो रचा तुम्हीं ने है प्रतीत॥
है हमें तुम्हारा अमित गर्व।
है तव कृतज्ञ संसार सर्व॥
है भारत धन्य अवश्यमेव।
तुम हुए जहाँ अवतीर्ण देव॥

१२६—हिडम्ब—यह राक्षस था। इसकी बहिन की शादी भीम से हुई।

१३०—हिडम्बी—राक्षसी थी। हिडम्ब की बहिन थी इसकी शादी भीम से हुई थी।

१३१—हस्तिराजा—इस के नाम से हस्तिनापुर आबाद हुआ।

१३२—युधिष्ठिर—इनका वर्णन आगे दिया गया है।

१३३—युयुत्सु—इनकी माँ वेश्या और पिता धृतराष्ट्र थे।

१३४—यौवनाश्य—यह राजा थे। भीमसेन ने युद्ध की समाप्ति पर इनसे अश्वमेध यज्ञ के लिये घोड़ा लिया। यह पत्नी सहित यज्ञ के लिये जल लाये। इन की पत्नी का नाम चन्द्रावली था।

१३५—चंद्रमा—यों तो यह समुद्र से निकले हुए चौदह रत्नों में से एक रत्न है। मगर यों भी कहा जाता है कि इनकी माँ अनुसूया व पिता अत्रि जी थे।

(ईश्वर प्रार्थना)

तू है सभी का अफ़सर साहब ग़रीबपरवर।
मामूर हो रहा है .कुदरत कलाम तेरा॥
जल थल के जीव सारे सूरज व चाँद तारे।
मशहूर हो रहा है आलम तमाम तेरा॥
आलम में तू ही तू है गुल में तू मिस्ल बू है।
भरपूर हो रहा है सब में मुक़ाम तेरा।
सुन ले पुकार मेरी करता है अब क्यों देरी।
मजबूर हो रहा है ग़म से .ग़ुलाम तेरा॥
सतचित्त और आनन्द मैं तो हूँ तेरा बन्दा।
मख़मूर हो रहा है पीकर के जाम तेरा॥

युधिष्ठिर का जीवन-चरित्र

दुर्वासा ऋषि ने प्रसन्न हो कर कुन्ती को आकर्षण मंत्र बतलाया था। उसी के द्वारा कुन्ती ने कुँवारेपने ही में सूर्य्य का आवाहन किया। फल-स्वरूप कर्ण का जन्म हुआ जिनको कुन्ती ने लोक-लाज क कारण जल में बहा दिया। जब राजा पांडु को मृग रूप ऋषि ने श्राप दिया कि तुम अपनी पत्नी से भोग करते ही मृत्यु को प्राप्त होगे। तब पांडु राजा ने निस्सन्तान होने के कारण कुन्ती को आकर्षण मंत्र द्वारा देवताओं को बुला पुत्रोत्पत्ति करने की आज्ञा दी। तब धर्मराज को आवाहन कर उन्हीं के संयोग से युधिष्ठिर की उत्पत्ति कराई गई। १०० कौरव तथा पाँच पांडव सब में सब से बड़े यही थे और राज्य के हक़दार थे। अपने अन्य भाइयों के साथ गुरु द्रोणाचार्य जी से अस्त्र-शस्त्र विद्या पढ़ी। राजा पांडु के मरने पर चक्षुहीन (अन्धे) धृतराष्ट्र राजा बनाये गये। जब युधिष्ठिर के राज मिलने का समय आया तब अपने सब से बड़े पुत्र दुर्योधन के बहकावे में आकर राजा धृतराष्ट्र युधिष्ठिर को

राज्य देने से मुकुर गये। दुर्योधन ने एक सुन्दर लाख का भवन बनवाया जो वारणावर्त्त में था वहाँ पाँच पांडव रहने को भेजे गये उस भवन में आग लगाई गई। पाँच भाई बाल बाल बचे और वहाँ से बच कर बन में चले गये और इधर उधर भटकते फिरे। इसी दशा में राजा द्रुपद के यहाँ स्वयम्वर में पहुँचे और अर्जुन के द्वारा द्रौपदी को पाया। राजा धृतराष्ट्र ने पाँचों भाइयों को बुला पाँच गाँव जीवन-निर्वाह को दे दिये मगर पाँचों भाइयों ने भुजबल द्वारा अपना राज्य बढ़ाया और राजाओं से कर ले धन को बढ़ाया। खांडवबन के जलने पर अर्जुन ने मय दानव को बचा लिया था। इस बदले में उसने एक ऐसी सभा बना दी कि जिसमें जल के स्थान पर थल व थल के स्थान पर जल और दीवार के स्थान पर द्वार व द्वार के स्थान पर दीवार का भ्रम होता था। राजा युधिष्ठिर अब सब प्रकार भरपूर राजा थे।

इनके समय के बड़े बड़े काम ये हैं:—

१—पाँच गाँव पाकर, भाइयों की सहायता से धन व राज बढ़ा कर श्रीकृष्णचन्द्रजी की सलाह से राजसूय यज्ञ करने की ठानी।

२—श्रीकृष्णचन्द्र जी की सलाह से भीम तथा अर्जुन को कृष्ण जी के साथ भेज भीम के हाथ से मल्लयुद्ध में जरासंध का बध कराया और जरासंध के यहाँ क़ैदी अनेक राजाओं को क़ैद से छुड़ाया। भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव ने चारों तरफ़ जाकर राजाओं को हराया और उनसे कर लिया।

३—बड़ी धूम-धाम से राजसूय यज्ञ का प्रारम्भ हुआ। भीष्म जी की सलाह से सब से पहिले श्रीकृष्णचन्द्रजी का पूजन हुआ। यह बात शिशुपाल को बुरी लगी। शिशुपाल जब पैदा हुआ था, इसके तीन भुजा व तीन नेत्र थे। पंडितों ने कहा कि जिसको देखकर इसकी एक भुजा व एक नेत्र जाता रहेगा

उसीके हाथ यह मरेगा। कृष्णचन्द्र जी को देखकर ऐसा हुआ, तब शिशुपाल की माँ अर्थात् कृष्ण जी की बुवा ने जीवदान माँगा। कृष्ण जी ने कहा कि मैं इसके सौ अपराध क्षमा कर दूँगा। आख़िर यज्ञ में सौ अपराधों के बाद शिर काट लिया। यज्ञ सकुशल पूरा हुआ। यज्ञ में ख़ूब ख़र्च हुआ व ख़ूब दान दिया गया।

४—दुर्योधन ने सभा देखने की इच्छा प्रकट की उनकी अनोखी बनावट के कारण धोखा खाया इस पर द्रोपदी व भीम बहुत हँसे व हँसी उड़ाई बस दुर्योधन को बहुत बुरा लगा। उसने लड़ाई में पांडवों को जीतना कठिन जान शकुनि द्वारा जुए के खेल में हरा सब राज्य जीत लिया और १२ वर्ष के लिये बनवास, १ वर्ष का गुप्तवास पांडवों को दिलाया, देखो जुआ का खेल कैसी बुरी बला है। यहीं से कौरवों व पांडवों के बीच घोर शत्रुता बढ़ चली।

५—युधिष्ठिर अपने शेष भाई तथा द्रोपदी के साथ वन को गये। १२ वर्ष वन में इधर-उधर फिरते रहे। तीर्थों में गये। कृष्ण-चन्द्रजी बीच २ में आते-जाते रहे व धीरज देते रहे। दुर्योधन इनकी अप्रतिष्ठा करने सेना समेत वन में गया वहाँ चित्ररथ गंधर्व ने पकड़ कर बाँध लिया, तब इन्होंने अर्जुन के द्वारा छुड़वाया।

६—१२ वर्ष बीतने पर विराट राजा के यहाँ पहुँचे, भाइयों के साथ भेष व नाम बदल कर रहे। इन्होंने अपना नाम कंक रक्खा था, राजा को पाँसा खिलाते थे। १ वर्ष पीछे राजा ने जाना तब अपना अपराध क्षमा कराया।

७—१३ वर्ष बाद श्रीकृष्णचन्द्र जी को अपना राज्य पाने की इच्छा से दुर्योधन के पास भेजा मगर दुर्योधन ने सुई की

नोक बराबर भी भूमि न देने को कहा तब लड़ाई की तैयारियाँ करने लगे।

८—युद्ध में कोई बड़ा काम इनके हाथों नहीं हुआ। हाँ राजा शल्य इन्हीं के हाथों मारे गये। यह कई बार युद्ध में से भाग भाग आये, गुरुजनों के भक्त रहे।

९—गुरु द्रोणाचार्य की मृत्यु का कारण इनका सच मिला झूठ बोलना था, इसी थोड़ी सी झूठ बोलने ने इनको नरक दिखाया। ये जीवन भर सत्य बोलते तथा धर्म का पालन करते रहे।

१०—युद्ध के पीछे अपने पुत्रों की मृत्यु से राजा धृतराष्ट्र व रानी गांधारी को बड़ा भारी दुःख हुआ मगर युधिष्ठिर की प्रार्थना, सेवा तथा नम्र बातों से दोनों का दुख कम हुआ। यह सदा इनको सुख पहुँचाने का उपाय करते रहे।

११—युद्ध के पीछे राज्य-गद्दी पर बैठे। भीम, वृषकेतु और मेघ-वर्ण को राजा यौवनास्य के यहाँ भेज यज्ञ का घोड़ा मँगवा अश्वमेध यज्ञ किया व घोड़े के साथ अर्जुन, प्रद्युम्न व वृषकेतु को भेजा। अंत में अश्वमेध यज्ञ सकुशल पूरा हुआ।

१२—३६ वर्ष राज्य किया। युद्ध के पीछे भीष्म जी के पास गये, उनसे उपदेश ग्रहण किया। जब भीष्म जी ने शरीर त्यागा उनकी विधिपूर्वक क्रिया की।

१३—जब कृष्णचन्द्र जी ने इस लोक को छोड़ा तब ये भाइयों के साथ हिमालय में गलने चले गये। हिन्दुओं के मतानुसार हिमालय देवस्थान है इसी विचार से धर्मराज युधिष्ठिर सब भाई तथा द्रोपदी समेत उत्तराखंड को गये। इसी मार्ग में धर्मराज कुत्ता बन कर इनके साथ हो लिये। इनके सब भाई द्रोपदी समेत गल गये। कुत्ता और यह दोनों बच रहे। जब यह

सदेह स्वर्ग जाने लगे तब कुत्ते के कारण रोके गये। इनसे कुत्ते को छोड़ने के लिये कहा गया मगर किसी प्रकार राज़ी नहीं हुए आख़िर धर्मराज कुत्ते का रूप छोड़ अपने रूप में प्रगट हुए और इनको शुभ आशीर्वाद दिया। सदेह स्वर्ग गये पहिले नरक देखना पड़ा फिर भाइयों व द्रौपदी समेत स्वर्ग में सुखपूर्वक रहे।

सरांश यह है कि युधिष्ठिर धर्मात्मा, शान्त, विनयी, मृदु-भाषी, लड़ाई से दूर रहने वाले तथा क्षमावान् थे। अपने बड़ों की सेवा में ख़ूब मन लगाते थे।

भीम का जीवन-चरित्र

आकर्षण मंत्र द्वारा कुन्ती ने पवन देव को बुलाया तथा भीम की उत्पत्ति कराई। यह बहुत बलवान थे। इनकी भुजाओं में अपार बल था। गुरु द्रोण से अस्त्र-विद्या पढ़ी। इनके बड़े बड़े काम ये हैं:—

१—लड़कपन की दशा में यह खेल में कौरवों को हराते थे और उनको ठोकते-पीटते थे। कौरव दुखी थे। आख़िर सब ने भीम का न्योता किया व भोजन के साथ विष दे इनको ज़ंजीरों से बाँध गंगा में डाल दिया। गंगा में बहते हुए साँप ने इन्हें काटा। धीरे २ विष घटा व नाग-लोक पहुँचे। वहाँ गुन-मंजरी (जो नाग कन्या थी) से विवाह किया। एक वर्ष पीछे वहाँ से लौटे।

२—लाख-भवन से बच कर जब भाग रहे थे तब इनकी गदा घर के भीतर रह गई। जब गदा लेने घर गये तब अग्नि ने इनको घेर लिया और अपने समान तीन सौ बीर देने के बचन पर छोड़ा। उसी वादे को पूरा करने के लिये इन्होंने १०० भाई

कौरव व सौ भाई कीचक व सौ भाई राजा कलिंग के मारे और अग्नि के अर्पण किये।

३—इस दशा में जब वन को जा रहे थे। हिडम्ब राक्षस से युद्ध हुआ उसको मार उसकी बहिन हिडम्बा से विवाह किया जिससे घटोत्कच का जन्म हुआ।

४—जुआ खेलने के बाद जब दुःशासन ने द्रौपदी का चीर खींचा और दुर्योधन ने जाँघ पर बैठाने की इच्छा की तब इन्होंने दुःशासन को मार बाँह उखाड़ लोहू पीने तथा दुर्योधन को जाँघ तोड़ मारने की प्रतिज्ञा की और उसे युद्ध में पूरा कर दिखाया।

५—१२ वर्ष के वनवास के समय द्रौपदी की इच्छानुसार फूल लेने कुवेर की पुरी में गये। वहाँ हनुमान जी से वाद-विवाद बढ़ा। अन्त में हनूमान जी को प्रसन्न कर युद्ध में शामिल होने का वचन लिया। युद्ध में हनुमान जी अर्जुन के रथ पर रहे।

६—विराट नगरी में अपना नाम जयंत व वल्लभ रख कर रहे वहीं द्रौपदी को छेड़ने के कारण कीचक को उसके ९९ भाइयों समेत मारा।

७—कीचक के मरने पर कौरवों ने राजा विराट पर चढ़ाई कर दी। उस समय इन्होंने राजा विराट को पूर्ण सहायता दी।

भीम के युद्ध के बड़े बड़े काम

१—प्रथम दिन रथ पर चढ़ दुर्योधन से युद्ध किया।

२—दूसरे दिन रथ पर चढ़ कलिंग देश के राजा व द्रोणाचार्य व दुर्योधन से युद्ध किया।

३—तीसरे दिन भगदत्त से युद्ध किया।

४—चौथे दिन भूरिश्रवा से युद्ध हुआ। इसी दिन इन्होंने दुर्योधन को मूर्च्छित किया।

५—पर्वतास्त्र के सामने अड़े रहने में इन्होंने पाँचवें दिन यश पाया और इस दिन घोर युद्ध करके बहुत से राजकुमारों को मार डाला।

६—छठवें दिन नारायण बाण के सामने मुँह किये डटे रहे इसका वर्णन अलग दे दिया है।

७—सातवें दिन कलिंग देश के राजा के ९९ भाइयों को राजा समेत मार डाला और नौ लाख हाथी मारे। यह सब कृष्णचन्द्र जी की कृपा व दिये हुए बल द्वारा किया। द्रोण से सामना हुआ।

८—नवें दिन दुर्योधन से युद्ध हुआ। तीन सौ राजा भीम के हाथ मारे गये। इसी दिन भीष्म जी ने घोर युद्ध कर पांडवी सेना को मथ डाला व कृष्णचन्द्र जी को हथियार पकड़वा दिया।

९—ग्यारहवें दिन द्रोण से सामना हुआ।

१०—अर्जुन की ख़बर लेने गये। जब वह जयद्रथ को मारने के विचार से व्यूह में घुस घोर युद्ध कर रहे थे यह युद्ध का तेरहवाँ दिन था।

११—पंद्रहवें दिन अश्वत्थामा को रथ समेत तीन सौ कोस पर फेंका।

१२—सोलहवें दिन २० भाई दुर्योधन के मारे गये।

१३—सत्रहवें दिन दुःशासन को मार उस की बाँहों का लोहू पिया व उसके लोहू से द्रौपदी के बाल बँधवाये।

१४—अठारहवें दिन रात में दुर्योधन को ढूँढ़ने चले। साथ में कृष्णचन्द्र जी व युधिष्ठिर व अर्जुन थे। दुर्योधन को ढूँढ़ कर युद्ध की बातचीत की। दुर्योधन ने कहा कि मेरा व तुम्हारा जोड़ है; परन्तु तुम राजा नहीं हो इसीलिये मैं युद्ध न करूँगा तब श्रीकृष्ण जी के आदेशानुसार हरिवंश पुराण को बग़ल में दाब भीमसेन युधिष्ठिर के सामने जा खड़े हुए तब युधिष्ठिर ने झुक कर प्रणाम किया। दुर्योधन ने यह देख

भीम से युद्ध करना स्वीकार कर लिया; परन्तु युद्ध में भीम ने इनकी जाँघ तोड़ डाली और दुर्योधन की इति श्री कर डाली। इन सब बातों का सार यह है कि भीमसेन की भुजाओं में अपार बल था। कहा जाता है कि इनके शरीर में दस हज़ार हाथियों का बल था। जो कुछ हो इतना अवश्य है कि जो काम गाण्डीव धनुष के द्वारा अर्जुन ने कर दिखाया वही काम अपनी भुजाओं के द्वारा भीम ने कर दिखाया। भीम तुम को कहाँ पावें; परन्तु तुम्हारी कीर्त्ति-गाथा जब तक आर्य्यों का नाम रहेगा, रहेगी।

१५—बड़े युद्ध में बड़े २ काम किये। जब भीष्म जी ने नारायण बाण चलाया तब श्रीकृष्णचन्द्रजी की सलाह से पांडवी सेना पीठ देकर खड़ी हो गई मगर ये बाण की ओर मुँह किये डटे रहे। जब बाण इनकी ओर लपका तब श्रीकृष्ण जी ने झपट पेट में छिपा इन्हें बचाया। कृष्णचन्द्र जी की सलाह से अश्वत्थामा हाथी को मार गिराया यही घटना गुरु दोणाचार्य्य के प्राण ले गई। द्रौपदी ने दुःशासन के लोहू से बाल बाँधे।

१६—युद्ध हो जाने के पीछे सब भाई धृतराष्ट्र के पास गये और उनसे गले मिले। जब भीम की बारी आई कृष्ण जी ने पहिले से बनवाये हुए लोहे के भीम को आगे किया जिसको धृत-राष्ट्र ने छाती से दबा कर चूर चूर कर दिया। भीम बच गये।

१७—ये युधिष्ठिर के साथ जाकर हिमालय में गल गये।

अर्जुन का जीवन-चरित्र

आकर्षण मन्त्र द्वारा इन्द्र के संयोग से तथा कुन्ती के गर्भ से इनकी उत्पत्ति हुई। इन पर हमारा देश जितना गर्व करे थोड़ा है। गुरु द्रोण से विद्या पढ़ी, अपने सब भाइयों में धनुर्विद्या में बढ़े-चढ़े निकले। युद्ध में अनोखे काम किये, श्रीकृष्णचन्द्रजी के बड़े भारी

भक्त थे। दोनों को मिला कर नर नारायण कहते हैं इनके बड़े २ काम ये हैं :--

१—जन्मते ही देवताओं ने हर्ष प्रकट किया।

२—गुरु जी से पढ़ते समय बाण द्वारा गंगा जी की जल-धारा को खींच फुलबगिया सींचते थे।

३—शिक्षा समाप्त होने पर परीक्षा में सबसे बढ़ कर निकले। यह देख कर्ण से न रहा गया तब युद्ध से बाल बाल पिंड छूटा वहीं से कर्णार्जुन में बैर बढ़ा।

४—गुरु जी की आज्ञा से युद्ध में परास्त कर द्रुपद को पकड़ लाये और गुरु जी के चरणों में ला डाला।

५—महालक्ष्मी की पूजा के दिन बाणों का पुल बना इन्द्रलोक से ऐरावत हाथी को लाये। कुन्ती ने प्रसन्न होकर हाथी की पूजा की व इनको हृदय से लगाया।

६—मछली की आँखें बेध द्रौपदी को पाया और अगणित राजाओं के बीच यश पाया।

७—जुआ में हार कर बन को गये। द्रौपदी पाँचों भाइयों की पत्नी बनाई गई थी। तब सब भाइयों ने यह नियम बनाया कि जब एक भाई द्रौपदी के पास हो तब और भाई न जावे, यदि जावे तो बन में जावे। गाय को कसाई के हाथ से बचाने को यह धनुष लेने गये उस समय युधिष्ठिर द्रौपदी के पास थे। प्रण के अनुसार यह बन को गये।

८—समुद्र के तट पर इनसे व हनूमान जी से विवाद हुआ। अर्जुन ने बाणों का पुल बना दिया। हनूमान जी जब पुल पार करने लगे तब कृष्ण जी ने आकर पुल की रक्षा की व दोनों का विवाद मिटाया।

९—तपस्या कर शिव जी को प्रसन्न किया व उनसे पाशुपतास्त्र

लिया। वहाँ से इन्द्र लोक गये और देवताओं के दिये अस्त्र पाये।

१०—राजा विराट के यहाँ गये। वहाँ बृहन्नला नाम रख कर रहे और राजा की कन्या को गायन तथा नृत्य-कला की शिक्षा दी।

११—वनवास के समय की समाप्ति कर कौरवों ने चढ़ाई की, तब अर्जुन ने उत्तरकुमार को सारथी बना सेना को हराया।

१२—युद्ध में बड़े २ काम किये। पांडवों की सेना की जान थे। भीष्म जी तथा कर्ण इन्हीं के द्वारा युद्ध में निपातित हुए। भगदत्त का हाथी समेत बध व जयद्रथ-बध भी इन्हीं के हाथ हुआ। प्रारम्भ में युद्ध से अलग देख गीता का उपदेश कराया गया। युद्ध से पहिले ये कृष्णचंद्रजी को युद्ध का न्योता देने गये। वहाँ दुर्योधन पहिले ही से पहुँच चुका था। कृष्णचंद्र जी ने दोनों जनों से पूछ कर सहायता के दो भाग किये। एक ओर चार लाख अपनी सेना दूसरी ओर निहत्थे आप। अर्जुन ने निहत्थे श्रीकृष्ण को तथा दुर्योधन ने चार लाख सेना को लिया। श्रीकृष्णचंद्रजी अर्जुन के सारथी बनकर युद्ध में रहे। पांडवों को विजयी बनाने वाले श्रीकृष्णचंद्रजी ही थे।

अर्जुन व युद्ध के दिन

पहिला दिन—रथ पर चढ़ युद्ध-भूमि में आये। सामने अपने सगे संबंधियों को देख मोह में पड़ गये। श्रीकृष्णचंद्र जी की शिक्षा से मोह टूटा। दुःशासन से सामना हुआ। शत्रु के हज़ार राजा व बहुत से घोड़े अर्जुन के हाथों मारे गये।

तीसरा दिन—भगदत्त मय अपने विशाल हाथी अर्जुन के हाथों मारा गया।

पाँचवाँ दिन—पर्वतास्त्र आने पर युद्ध-भूमि में डटे रहे।

रणाङ्गण में श्री कृष्णार्जुन　میدان جنگ میں شری کرشن اور ارجن
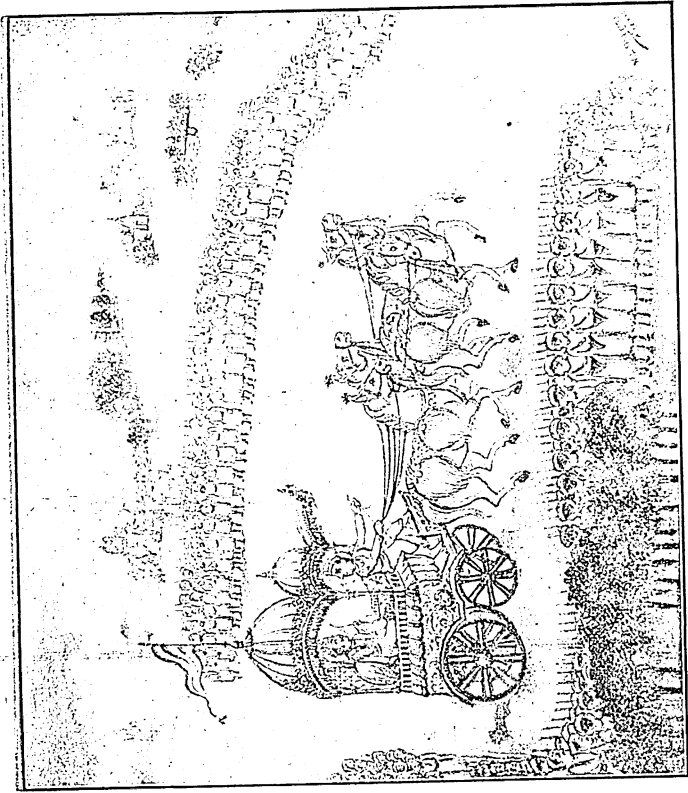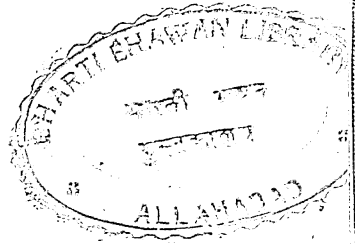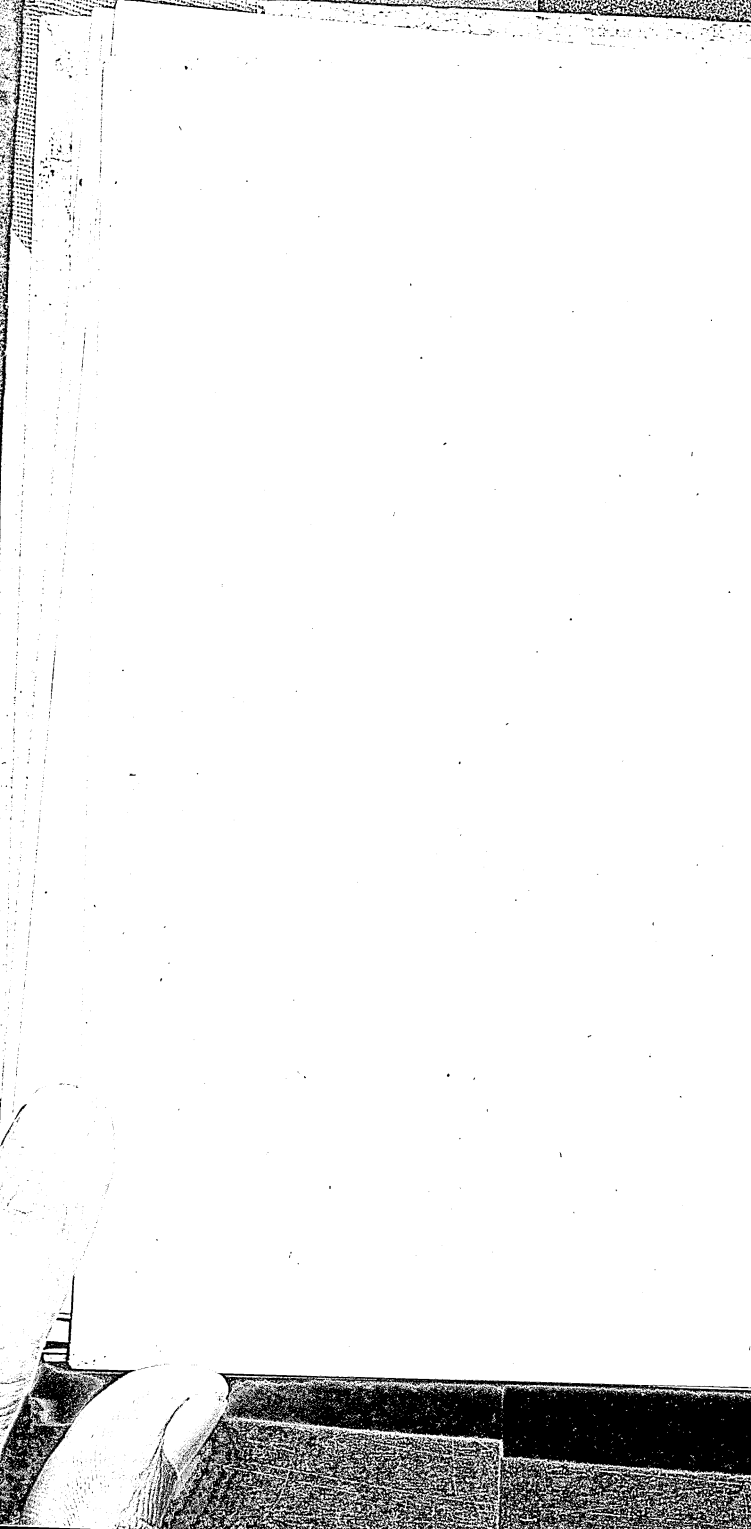
छठवाँ दिन—नारायण बान के सामने हथियार छोड़ पीठ दे खड़े हो गये। सेना ने भी यही किया। यह सब कृष्णचंद्रजी की सलाह से हुआ।

आठवाँ दिन—दुर्योधन से मुकुट माँग दुर्योधन के बहाने भीष्म जी से महाकाल नामी शर ले आये और अपने पक्ष की प्राण-रक्षा की।

दसवाँ दिन—शिखंडी को आगे कर शिखंडी की आड़ में भीष्म जी को शर-शय्या पर सुलाया।

ग्यारहवाँ दिन—सुशर्म्मा से युद्ध हुआ।

तेरहवाँ दिन—जयद्रथ को मारा।

चौदहवाँ दिन—इस दिन दुर्योधन गुरु जी के दिये अभेद्य कवच को पहिन अर्जुन से लड़ने आया। घोर युद्ध हुआ।

सोलहवाँ दिन—कृष्णचंद्र जी ने आज अर्जुन को कर्ण से दूर रक्खा। घटोत्कच को कर्ण से लड़ने भेजा। जब वज्र शक्ति कर्ण ने चला दी और घटोत्कच को मार लिया तब कृष्णचंद्र जी कर्ण के सामने पहुँच गये। जब तक वज्र शक्ति उस कर्ण के हाथ रही कृष्णचंद्रजी अर्जुन को हटाये रहे।

सत्तरहवाँ दिन—कर्ण का रथ कीचड़ में फँस गया। जब कर्ण रथ को कीचड़ से निकालने में लगा तब कृष्णचंद्र जी के अनुरोध से अर्जुन ने निहत्थे कर्ण को मार गिराया। अर्जुन ने कृष्णजी के अनुरोध से ऐसा किया।

अठारहवाँ दिन—रात में दुर्योधन की मृत्यु का ढंग देख कर अश्वत्थामा क्रोधित हुआ और बची खुची पांडवी सेना पर छापा मारा और बचे हुए लोगों का सिर काट लिया। इसीमें पांडवों के पुत्र भी थे। पाँचो पांडव दूसरे स्थान पर थे इससे बच गये। अश्वत्थामा डर कर भाग गया। साथ में कृपाचार्य्य व कृतवर्म्मा थे।

उन्नीसवाँ दिन—अर्जुन ने पीछा करके अश्वत्थामा को जा पकड़ा। उसने ब्रह्मास्त्र चला दिया। श्रीकृष्ण जी ने सब की रक्षा की। उत्तरा के गर्भ-स्थित पुत्र परीक्षित बाण के प्रभाव से मृतक हुए; परन्तु जन्म होने पर कृष्णजी की कृपा से जीवित हो गये।

१३—अश्वमेध यज्ञ में घोड़े की रक्षा करते हुए अपने पुत्र बभ्रुवाहन के हाथों मारे गये। अमृत द्वारा जिलाये गये। गङ्गाजी ने इनको श्राप दे दिया था कि तुम ने अन्याय से भीष्म जी का पतन किया है इसलिये ६ माह में तुम्हारी मृत्यु होगी।

१४—जब यादव लोग परस्पर लड़ मरे और बहेलिया के बाण द्वारा श्रीकृष्ण जी संसार छोड़ने लगे तब अर्जुन द्वारका पहुँचे और कृष्णचंद्र जी के आदेशानुसार गोपियों को ले चले। राह में भीलों ने लूट लिया। गाण्डीव धनुष तथा बाण कुछ काम न आये तभी कहा जाता है कि "मनुष बली न होत है समय होत बलवान। भीलन लूटी गोपिका वेई अर्जुन वेई बान"।

लौट कर सब हाल अपने बड़े भाई युधिष्ठिर से कहा; तब बिना श्रीकृष्णचन्द्रजी के संसार को सूना जान सब भाई हिमालय में गलने चले गये। वहीं जा कर अर्जुन गल गये।

१५—अर्जुन के द्रौपदी, उलूपी, चित्रांगदा व सुभद्रा नाम की चार स्त्रियाँ थीं।

१६—युद्ध के प्रारम्भ में अपने कुटुम्बियों, गुरुजनों व सम्बन्धियों को सामने देख धनुष रख दिया। कृष्णचन्द्रजी इनके सारथी बने थे। उन्होंने उपदेश दिया, वही उपदेश गीता के नाम से प्रसिद्ध है।

ख़ैर कुछ भी हो अर्जुन स्वनाम धन्य थे और कृष्णचन्द्र की भक्ति में लीन थे। आओ वीर अर्जुन की याद में निम्नलिखित बातें याद रक्खें :—

हमी आशिक़ दिवाने हैं हमें दुनिया से यारी क्या ॥
मुसाफ़िर हैं न ठहरे हैं न सुनते हैं न बहरे हैं।
सराँ में रात भर रहना मकाँ पर नक़्शकारी क्या ॥
न ख़लक़त हैं न ख़ालिक़ हैं नहीं मतलूब तालिब है।
न दौलत है न दाता है तो फिर शाहो भिखारी क्या ॥
नहीं हम मुल्क मालिक हैं नहीं मगलूब गालिब हैं।
तमाशा ख़्वाब का देखा सँवारी और बिगारी क्या ॥
नहीं हम गुरू चेले हैं न छैले हैं न अलबेले।
न मरना है न जीना है तो फिर सोचा बिचारी क्या ॥
जो हैं दुनियाँ में मतवाले असल वो ही हैं मतवाले।
कल्पना चित्त की सारी तो फिर पूजा पुजारी क्या ॥
नहीं पृथ्वी गगन जल है पवन आकाश भी छल है।
न बस्ती है न रहना है तो फिर अंटा अटारी क्या ॥
नहीं हम ख़ौफ़ से ख़ायफ़ नहीं कुछ हैफ़ से हायफ़।
भ्रम है सत असत प्यारे तो पंडित ब्रह्मचारी क्या ॥
सभी एकरूप चेतन है नहीं कुछ लेत देतन है।
लखो तज नाम रूपों को तो फिर नर और नारी क्या ॥
नहीं कुछ काम करने का नहीं कुछ सोच मरने का।
निपट निश्शंक निर्भय है भला फिर आहोज़ारी क्या ॥

अर्जुन के दस नाम

१—अर्जुन २—पारथ—युद्ध करके शिव जी को प्रसन्न किया ३—विजयी—यह नाम इन्द्र ने रक्खा ४—किरोटी—कृष्णचंद्रजी ने मुकुट पहिनाया ५—विजय भरत—गुरु जी ने नाम रक्खा, जब द्रुपद के यहाँ गये ६—धनञ्जय—कुबेर को विजय किया ७—सव्य-साची—उलटे हाथ से भी बाण चलाते थे ८—श्वेत बाज—सवारी

में सफ़ेद घोड़े थे ९—कपि ध्वज—रथ की ध्वजा पर हनूमान जी थे १०—शब्दभेदी—शब्द पर तीर लगाने वाले।

नकुल का जीवन-चरित्र

जब राजा पांडु को श्राप मिला तब उन्होंने कुन्ती से कहा कि माद्री को भी आकर्षण मंत्र बता दो जिससे ये भी निस्सन्तान न रहें। पति की आज्ञा से कुन्ती ने वैसा ही किया। माद्री ने आकर्षण मंत्र द्वारा अश्विनीकुमार का आवाहन किया उन्हीं के संयोग से नकुल व सहदेव की उत्पत्ति हुई।

नकुल सब भाइयों से अधिक रूपवान थे। सब बातों में भाइयों के सहायक व साथ रहे। इनके बड़े २ काम ये हैं :—

१—तलवार की लड़ाई में बड़े ही चतुर थे। युद्ध में तलवार से ख़ूब काम लिया।

२—विराट राजा के यहाँ चाबुक सवारी पर रहे। इन्होंने अपना नाम ग्रंथिक रक्खा था, नकुल घोड़ों की पहिचान करने में बड़े चतुर थे और घोड़ों की दवा करना भी ख़ूब जानते थे इनके काम से राजा विराट प्रसन्न रहते थे।

३—युद्ध में वीरता से लड़े और भाइयों के सहायक रहे।

४—हिमालय में गल कर मरे।

सहदेव का जीवन-चरित्र

उत्पत्ति नकुल के हाल में पढ़िये। ये बड़े अच्छे ढंग पर शकुन की परीक्षा करते थे। कम बोलते थे। इन्होंने समय समय पर बहुत सी बातें बतलाईं। इनके काम बड़े २ नीचे दर्ज हैं :—

१—हर दशा में भाइयों के सहायक व साथ रहे। इन्होंने लाख-भवन से निकलने का द्वार बताया।

२—विराट नगरी में तंत्रिपाल नाम रख कर रहे। राजा ने इनको

गोपालों का अफ़सर बनाया था। चौपायों की पहिचान अच्छी करते थे।

३—बड़े युद्ध में इन्होंने शकुनि को मारा तथा अपने भाइयों के सहायक रहे।

४—अन्त में हिमालय में गल गये।

पांडवों की याद में नीचे की बातें याद रखिये:—

तू ही हक़ है ईमान लाने के क़ाबिल।
ये दुनियाँ नहीं दिल लगाने के क़ाबिल॥
तू मालिक है सिजदा कराने के क़ाबिल।
मैं बन्दा नहीं सर उठाने के क़ाबिल॥
हैं सभी श्रुतियाँ निश्चय लाने के क़ाबिल।
ये अनुभव नहीं आज़माने के क़ाबिल॥
तेरी शक्ल दिल में समाई नहीं है।
हमारा है मुँह औ दिखाने के क़ाबिल॥
जो आशिक़ है मेरा मैं आशिक़ हूँ उसका।
ये है हुक्म नातिक़ सुनाने के क़ाबिल॥
जो मैं हूँ सो तू है जो तू है सो मैं हूँ।
ये कल्मा नहीं भूल जाने के क़ाबिल॥
मैं ऐसा थका मंज़िले इश्क़ चलकर।
किसी जाँ नहीं आने जाने के क़ाबिल॥
गुरू चल दिये कह के निर्भय हो निर्भय।
नहीं अब रहा कुछ बलाने के क़ाबिल॥

द्रौपदी का जीवन-चरित्र

इनकी भी गिन्ती पंच कन्याओं में है। इनके पिता राजा द्रुपद थे। यह हवन-कुंड से अग्नि से जन्मीं। इनका जन्म कौरवों के नाश के लिये हुआ। स्वयम्वर के समय बहुत से राजा इकट्ठे

हुए ; मगर प्रण बहुत कठिन था कि जो बीर तराज़ू के परलों पर पैर रख जलते हुए कढ़ाह में मछली की छाया देख घूमते हुए चक्र के छेद में से हो कर बाँस पर लटकी हुई मछली की आँख बेध दे वही द्रौपदी के जयमाल का अधिकारी हो। अर्जुन ने यह कठिन काम पूरा कर दिखाया। आये हुए राजाओं में से बहुत तो धनुष को ही न उठा सके निशाना लगाना तो दूर रहा। कर्ण ने चाहा मगर जाति पाँति के पचड़े ने रोक लिया। द्रौपदी ने जयमाल अर्जुन को पहिना दी। जब पाँचो भाई द्रौपदी को लेकर अपने ठहरने के स्थान पर पहुँचे तो बाहर से माँ को आवाज़ दी कि आज हम लोग अनोखी भीख लाये हैं; तब माँ ने कहा कि पाँचो भाई मिलकर बाँट लो; मगर जब द्रौपदी को देखा तो बहुत सोच-बिचार में पड़ गई, मगर होनहार प्रबल है। अंत में माँ की आज्ञा के पालनार्थ पाँचों भाइयों ने द्रौपदी को अपनी स्त्री बनाया और हर भाई ने रहने का नियम बना लिया। जब द्रौपदी ने अर्जुन को जयमाल पहिनाई तब दुर्योधन से युद्ध होते २ बचा। सभा देखते हुए जब दुर्योधन उसकी अनोखी बनावट के धोखे में पड़ गये तब द्रौपदी ने हँस कर कहा कि अन्धों के अन्धे ही होते हैं। "रार की जड़ हाँसी" यह हँसी अनर्थ की जड़ हो गई। सच तो यह है कि भारी युद्ध का सूत्रपात इसी हँसी से हुआ। दुर्योधन ने जुए में पांडवों के साथ द्रौपदी को भी जीता। उस समय द्रौपदी मासिक धर्म से थी बदन पर केवल एक साड़ी थी। दुर्योधन जलाभुना था ही अपने भाई दुःशासन को बुला कर कहा कि द्रौपदी को पकड़ कर सभा में लाओ और नंगी करके मेरी जाँघ पर बैठाओ। दुःशासन द्रौपदी को पकड़ सभा में लाया और जब साड़ी को खींचने लगा तब द्रौपदी ने सभा में बैठे हुए गुरुजनों से पुकार मचाई व अपने पतियों को भी फटकारा, परन्तु सब व्यर्थ, अन्त में निराश हो श्रीकृष्णचन्द्र जी को पुकारा कि—
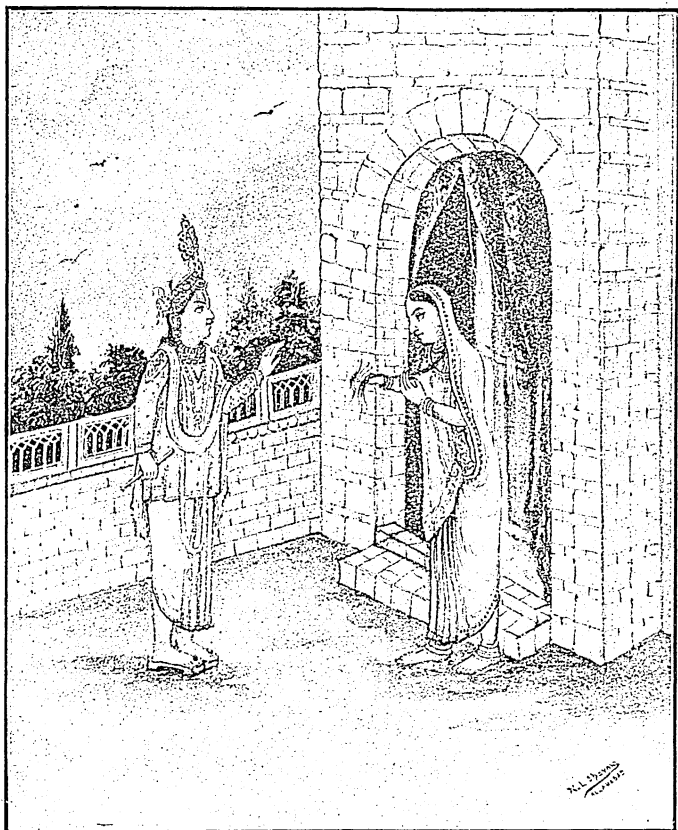
श्रीकृष्ण और द्रौपदी

न हममें साधन न हममें शुद्धि, न हममें बल है न हममें बुद्धि।
तेरे ही दर के हम हैं भिखारी, दया करो हे दयालु भगवन॥
जो तुम पिता हो तो हम हैं बालक, जो तुम हो स्वामी तो हम हैं सेवक।
जो तुम हो ठाकुर तो हम पुजारी, दया करो हे दयालु भगवन॥
प्रदान कर दो महान शक्ति, भरो हमारे में ज्ञान भक्ति।
तभी कहाओगे तापहारी, दया करो हे दयालु भगवन॥
न होगी जब तक कृपा की दृष्टि, न होगी जब तक दया की दृष्टि।
न तुम भी तब तक हो न्यायकारी, दया करो हे दयालु भगवन॥
हमें तो बस टेक नाम की है, पुकार ये राधेश्याम की है।
तुम्हारी तुम जानो निर्विकारी, दया करो हे दयालु भगवन॥

अभिमन्यु का जीवन-चरित्र

वीर अभिमन्यु तुम धन्य हो। तुम ने भारत वसुन्धरा का मुख उज्ज्वल कर दिया। हम लोग तुम पर जितना गर्व कर सकें थोड़ा है। जब अर्जुन घूमते-घामते द्वारिकापुरी पहुँचे, वहाँ एक उत्सव में श्रीकृष्णचंद्र जी की बहिन सुभद्रा को देखा और मोहित हो गये। अपनी विवाह की इच्छा श्रीकृष्णचंद्र जी पर प्रकट की। श्रीकृष्णचंद्र जी ने इनको सुभद्रा को हर ले जाने की राय दी। अंत में अर्जुन ने ऐसा ही किया।

यदुवंशी इस समाचार को सुन कर बहुत क्रोधित हुए, परन्तु कृष्णचंद्र जी ने समझा-बुझा कर यदुवंशियों को शांत किया। सुभद्रा के साथ अर्जुन का विवाह हो गया। सुभद्रा के गर्भ रहा। अर्जुन वीरों की कथायें व युद्ध की बातें सुभद्रा को सुनाया करते थे। दिन पूरे हो चुके थे। अर्जुन चक्रव्यूह का वर्णन सुभद्रा को सुना रहे थे। पहिले द्वार से ले कर छः द्वारों का वर्णन सुना गये। सातवें द्वार का वर्णन सुना ही रहे थे कि सुभद्रा के पेट में प्रसव की पीड़ा हुई। थोड़ी देर बाद अभिमन्यु ने

जन्म लिया। यह चंद्रमा के पुत्र बुध थे। श्राप-वश पृथ्वी पर अभिमन्यु हो कर जन्मे। अर्जुन ने अभिमन्यु को धनुर्वेद की शिक्षा दी। युद्ध के समय १४ वर्ष की अवस्था थी। कौरवों ने अर्जुन को युद्ध से दूर ले जाकर एक दूसरे युद्ध में फँसाया। उसी दिन द्रोणाचार्य्य ने चक्रव्यूह बनाया। पहले द्वार पर जयद्रथ को रक्खा। पांडव लोग व्यूह भेदना नहीं जानते थे। यह भेद कृष्ण जी, अर्जुन व द्रोणाचार्य्य जानते थे। अर्जुन व कृष्ण जी तो थे ही नहीं। युधिष्ठिर को भारी चिंता हुई। अंत में अभिमन्यु ने कहा कि मैं जब गर्भ में था पिता जी ने व्यूह का भेदना मेरी माता जी से कहा। ६ द्वार मैं भेद लूँगा। सातवें द्वार का भेद मैं सुन ही न सका कि मेरा जन्म हो पड़ा। भीमसेन आदि ने कहा कि अभिमन्यु चलो व्यूह में घुसो, हम लोग तुम्हारे साथ होंगे। अभिमन्यु रथ पर चढ़ कर चला। भीमसेन आदि साथ चले। अभिमन्यु जयद्रथ को पराजित कर द्वार के भीतर घुस गया; परंतु शिवजी के बरदान के प्रभाव से जयद्रथ ने और किसी पांडव को भीतर घुसने न दिया। अभिमन्यु बेचारा अकेला व्यूह में फँस गया। धन्य हो अभिमन्यु छोटी सी अवस्था और यह पराक्रम। बड़े बड़े वीर हैरान थे अभिमन्यु की हस्त-लाघवता व बाण-संचालन क्रिया को देख वीर लोग दाँतों के नीचे उँगली दबा रहे थे। देवतागण फूल बरसा रहे थे। ६ द्वार अभिमन्यु ने भेद डाले। सातवें द्वार पर अकेले अभिमन्यु को बड़े बड़े महारथियों ने घेर लिया; मगर जब तक अभिमन्यु के हाथ में धनुष रहा उस ने किसी को पास भी न फटकने दिया। अंत में कर्ण ने धनुष को काट दिया। फिर अभिमन्यु तलवार से लड़ा। तलवार भी काटी गई। तब रथ के पहिये को लेकर लड़ा उस के कटने पर लोहे के खंभे को हाथ में ले लड़ा। अंत में यह भी काट डाला गया। जब तुम निहत्थे हो गये तब कहीं जा कर शत्रुओं ने तुम्हें

मार पाया। मरना तो सभी को एक दिन है; परंतु तुम मरे नहीं सदा के लिये अमर हो गये। जब तक आर्य्यों का इतिहास रहेगा तुम्हारा शुभ नाम रहेगा।

आओ, अभिमन्यु की याद में निम्नलिखित याद रक्खें :—

चेतावनी

है मर्द वह जो काम पै अपने डटा रहे।
मैदान में उत्साह से आगे बढ़ा रहे॥
घबराय न पल भर भी कभी शेर दिल का दिल।
सर पर अगर पहाड़ सितम का तुला रहे॥
आयें बला से रोज़ बलायें नई नई।
सीना सिपर हो सामने हर दम अड़ा रहे॥
पीछे क़दम उठाय न ख़िदमाते मुल्क से।
आफ़त का गर्चे रोज़ निशाना बना रहे॥
मुश्किल को देख दिल में हो हरगिज़ न हिरासाँ।
बल्कि रुकावटों से बढ़ा हौसला रहे॥
वह तर्ज़ ज़िन्दगी हो कि मरने के बाद भी।
दुनिया के लब पै उसके लिये वाह वा रहे॥
ख़्वाहिश हो मालोज़र की तमन्ना न नाम की।
हर वक़्त जानोदिल से वतन पर फ़िदा रहे॥
मिट जाय जुस्तजूये तरक़्क़ी में क़ौम की।
ज़िन्दा हमेशा जिससे वह बादे फ़ना रहे॥
हिम्मत से काम लेते हैं जो इम्तहाँ के वक़्त।
उनको मदद पै कहते हैं परमात्मा रहे॥
फल ज़िन्दगी का पाया उन्होंने यहाँ कि जो।
मुल्कोवतनोक़ौम के हम दम सदा रहे॥

श्री कृष्णचंद्र जी अर्जुन से कह रहे हैं कि :—

हम भक्तन के भक्त हमारे ।
अर्जुन सुनो प्रतिज्ञा हमरी, यह ब्रत टरे न टारे ॥
जब जब भीर पड़े भक्तन पर, तब तब करत सहायो ।
भक्त के काज गरुड़-वाहन तज नंगे पायन धायो ॥
जब जब भीर पड़े भक्तन पर तब तब तिन को चेरो ।
देख विचार भक्ति के कारण रथ हाँकत हौं तेरो ॥
ये अभिमन्यु सुधाकर सुत है धरि शरीर भू आयो ।
श्राप-विवश नर-देही धारी भू पर रंग जमायो ॥
पूरण समय जान देही तजि चंद्र के लोक सिधायो ।
अगुआ बन वीरों का भू पर देश को नाम बढ़ायो ॥
हे नवयुवको जागो जागो प्रेम बारि बरसाओ ।
लेकर मार्ग सत्य का सबही देश का दुःख मिटाओ ॥
वीरों ने दे दे कर जानें यश की ध्वजा उड़ाई ।
वह यशध्वजा मलिन नहिं होवे सब मिलि करो उपाई ॥

विराट नगरी के युद्ध का वर्णन

जब पाँचा पांडव व द्रौपदी अपना २ नाम व वेष बदल राजा विराट के यहाँ रहे तब द्रौपदी से छेड़-छाड़ करने के कारण कीचक भीम के हाथ मारा गया । कीचक बड़ा बली था उसके मरने का समाचार पा दुर्योधन ने विराट का राज्य जीतने की इच्छा से चढ़ाई कर दी । अर्जुन व उनके भाइयों ने युद्ध में दुर्योधन को सेना समेत हरा दिया । यह लड़ाई भी बड़ी ज़ोरदार थी, इसमें अर्जुन ने उत्तर कुँवर को सारथी बना अकेले ही दुर्योधन को बड़ी भारी सेना समेत परास्त कर दिया ।

अर्जुन का पत्त

युद्ध के पाँचवें दिन श्रीकृष्णचन्द्र जी के आदेशानुसार भीम, अर्जुन, कृष्णचन्द्र, अभिमन्यु व सात्यकी को छोड़ शेष लोग

युद्ध से विरत हो गये। युद्ध के छठवें दिन भीष्म जी ने नारायण बाण चला दिया तब कृष्णचन्द्र जी के आदेशानुसार पांडवी सेना पीठ देकर खड़ी हो गई। भीम मुँह किये खड़े रहे। जब बाण भीम की ओर लपका तब कृष्ण जी ने दौड़ उनको पेट से चिपका लिया और उनके बदले में स्वयं पीठ दी और भीम को मृत्यु के मुख से बचाया। आठवें दिन अर्जुन दुर्योधन से मुकट माँग अपने शिर पर पहिन धोखा दे भीष्म जी से महाकाल नामी शर माँग लाये जिसको कि उन्होंने पांडवों के मारने के लिये निकाल रक्खा था। जब अर्जुन ने गंधर्वों के हाथ से दुर्योधन की रक्षा की थी, तब अर्जुन से कहा था कि जो चाहो माँगो। उन्होंने अपनी माँग को धरोहर के बतौर रक्खा। समय पर मुकट माँगा और अपना काम बनाया।

कृष्णचन्द्र जी का प्रण था कि इस बड़े युद्ध में मैं हथियार न पकड़ूँगा; परन्तु भीष्म की मार ने यह प्रण तुड़वा दिया और वह चक्र ले दौड़े, परन्तु अर्जुन ने चलाने न दिया। युद्ध के ग्यारहवें दिन शूरसेन व बारहवें दिन अभिमन्यु अर्जुन की अनुपस्थिति में शत्रुओं के हाथ मारे गये। शूरसेन कृष्णजी के मामा थे व अर्जुन के पक्ष में थे। तेरहवें दिन रात्रि को द्रुपद द्रोणाचार्य्य के हाथ मारे गये। पंद्रहवें दिन राजा विराट इन्हीं के हाथ मारे गये।

अठारहवें दिन अश्वत्थामा ने छापा मार बची-बचाई पांडवी सेना को सोते हुए मार डाला, केवल पाँचो पांडव कृष्ण व सात्यकी बचे।

इस बड़े युद्ध में अभिमन्यु का चक्र-व्यूह में घुसना व अकेले ही अपार सेना से युद्ध करना, सब के छक्के छुड़ाना व हथियार-रहित हो कर मारा जाना, अपनी कीर्त्ति-कथा सदा के लिये छोड़ जाना एक विशेष बात है।
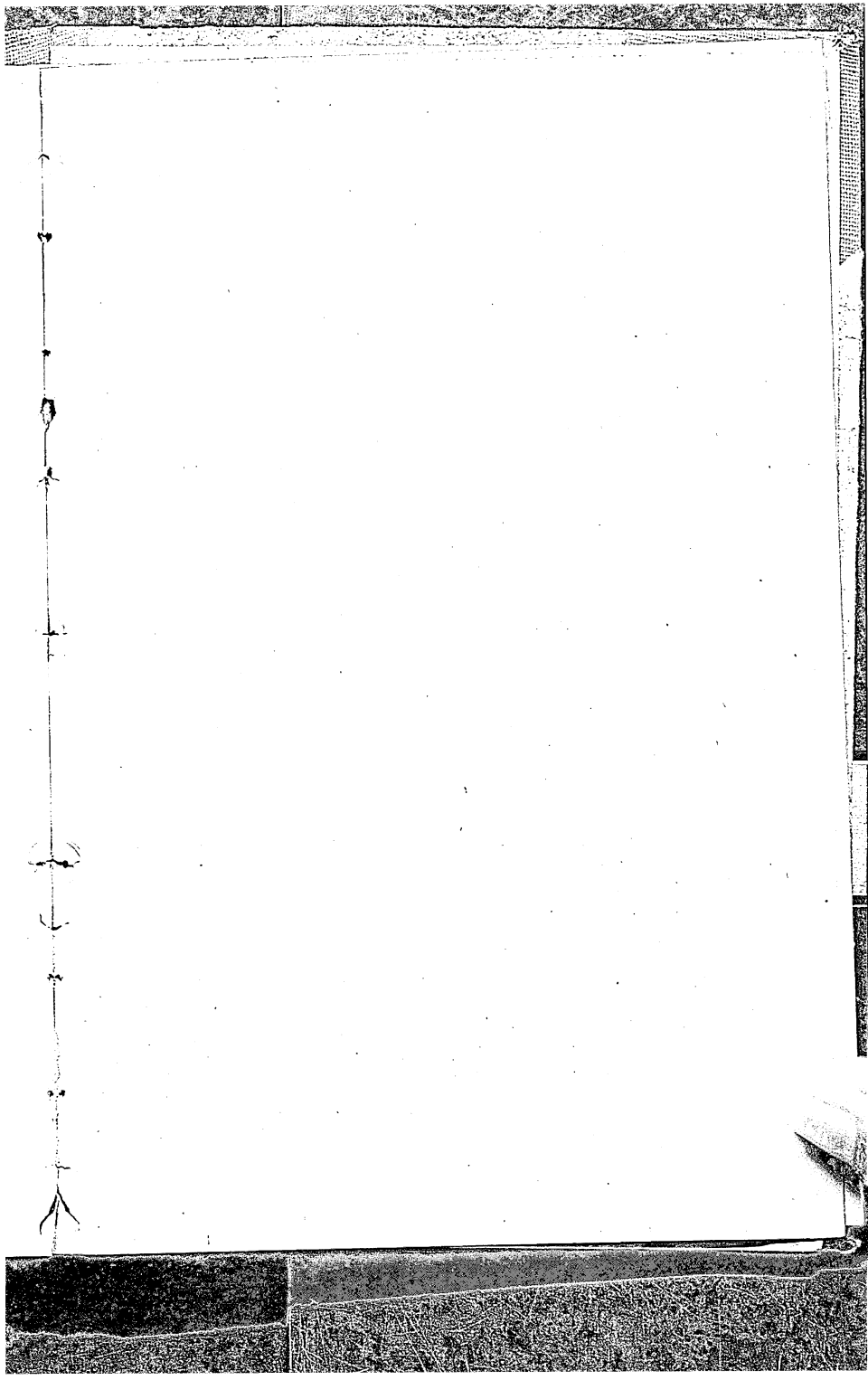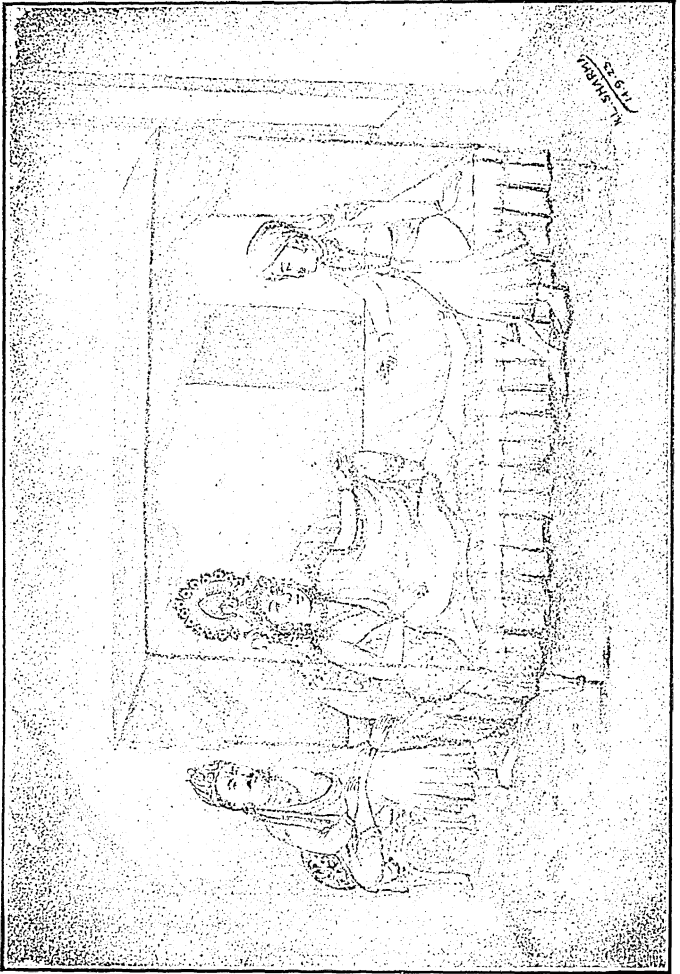
इस युद्ध में धृतराष्ट्र के वेश्या-पुत्र युयुत्स ने अपनी एक लाख फ़ौज के समेत युधिष्ठिर का साथ दिया।

कृष्णचन्द्र जी की सहायतायें

१—बिष के मारे भोम जब नागलोक में गये तब सर्पों से घोर युद्ध हुआ। वहाँ कृष्णचंद्र जी ने गरुड़ को भेज भीम की रक्षा की।

२—कृष्णचंद्र जी की सहायता से राजसूय यज्ञ पूरा हुआ।

३—द्रौपदी की पुकार पर चीर इतना बढ़ाया कि—

चीर को हरण न नेकहुँ भयो। दुःशासन को भुजबल सब गयो॥
कृष्ण की लीला अपरम्पार। कौन है जो पा जावे पार॥

४—बनवास के समय पांडवों को दुर्वासा ऋषि के श्राप से बचाया।

५—दूत बन दुर्योधन के पास गये और कोशिश की कि कौरवों पांडवों में समझौता हो जावे, लड़ाई न होने पावे मगर—

जो मूरख उपदेश के, होते जोग जहान।
तौ दुर्योधन बोध किन, आये श्याम सुजान॥

६—दुर्योधन व अर्जुन साथ साथ युद्ध का न्योता देने द्वारका पहुँचे कृष्णचन्द्र जी ने कहा कि एक ओर मैं बिना हथियार रहूँगा, दूसरी ओर मेरी सेना होगी। दोनों में जो जिसे चाहे ले। दुर्योधन ने सेना को तथा अर्जुन ने श्री कृष्णचंद्र जी को लिया।

७—युद्ध में श्री कृष्णचन्द्र जी अर्जुन के सारथी रहे।

८—युद्ध में जब अपना कुटुम्ब व अपने रिश्तेदारों को देख अर्जुन मोह में पड़ गये तब श्री कृष्ण जी ने उपदेश दे मोह दूर किया। यही उपदेश कृष्ण गीता के नाम से प्रसिद्ध है।

९—युद्ध में अपना प्रण तोड़ अपने भक्त भीष्म का प्रण पूरा किया।

कृष्णचन्द्र जी का कथन है कि "हम भक्तन के भक्त हमारे।"
जब २ भीर पड़ी भक्तन पै तब २ संकट टारे॥"

१०—चन्द्रमा के पुत्र बुध ने श्राप-वश अभिमन्यु का शरीर धारण किया था, अर्जुन को दूसरी लड़ाई में फँसा अभिमन्यु रूपी बुध का उद्धार किया। यदि १५ साल हो जाने पर बुध वापस न जाते तो दोनों वंशों का नाश कर डालते।

११—पुत्र-शोक के कारण अर्जुन अधीर हो गये, तब कृष्णचन्द्र जी इनको चन्द्र-लोक में ले गये, वहाँ बुध के द्वारा इन्हें उपदेश दिलवाया और इनका मोह-शोक दूर करवाया।

१२—सुदर्शन चक्र द्वारा सूर्य्य को ढक शाम हो जाने का भ्रम फैला अर्जुन के हाथ से असावधान जयद्रथ का बध करवा अर्जुन का प्रण पूरा कराया।

१३—युधिष्ठिर के मुँह से अश्वत्थामा के मरने का बात कहलवा गुरु द्रोणाचार्य का अन्त करवाया। इससे प्रथम शिखंडी द्वारा भीष्म जी का अन्त करवाया।

१४—कुन्ती द्वारा पाँच बाण, इन्द्र द्वारा कवच कुंडल कर्ण से मँगवा कर्ण का बल तोड़ा। घटोत्कच को भेज और घोर युद्ध करवा कर्ण की अमोघ शक्ति इन्द्र की दी हुई चलवा दी और अर्जुन की रक्षा कर ली।

१५—भीम को अपना बल दे दुःशासन का बध करवाया।

१६—भीम को उपाय बतला कर दुर्योधन का बध करवाया।

१७—युद्ध के पीछे पाँचो भाई पांडव धृतराष्ट्र के पास गये। एक एक कर मिले जब भीम की बारी आई तब कृष्णचन्द्र जी ने लोहे के भीम को आगे करके भीम की रक्षा की।

१८—स्वयं बाणों में घुस अर्जुन के हाथों सुधन्वा का बध करवा अर्जुन को विजय दिलवाई।

१९—मनोपुर के युद्ध में जब अर्जुन मारे गये तो कृष्ण जी पहुँचे और अपना पुण्य दे जीवन स्थिर किया।

२०—भक्ति की परीक्षा करने के लिये मोरध्वज का आधा शरीर माँग लिया।

२१—अश्वमेध यज्ञ के समय पटरानी रुक्मिणी सहित आये व जल लाये।

दुर्योधन का पक्ष

दस दिन भीष्म जी, पाँच दिन द्रोणाचार्य्य जी, दो दिन कर्ण व एक दिन शल्य सेनापति रहे। इनके पक्ष में ११ अक्षौहिणी सेना व ६०००० राजा थे। नवें दिन पांडवों ने भीष्म जी के पास जा उनकी मृत्यु का उपाय पूछा। उन्होंने कहा कि काशीराज की कन्या अग्नि में जल कर राजा द्रुपद के यहाँ शिखंडी नाम से जन्मी। उसे आगे करो तो मैं हथियार न पकड़ूँगा तब मुझे मार लेना। यही किया गया।

बारहवें दिन जयद्रथ-बध हुआ। जब अभिमन्यु व्यूह के भीतर घुसा तब जयद्रथ के मारे कोई पांडव न घुसने पाया। उस समय अर्जुन दूसरे स्थान पर लड़ रहे थे। जब अर्जुन शत्रुओं को जीत लौटे तब अभिमन्यु-बधवाली बात सुन बहुत दुखी हुए। कृष्ण जी के किये उपाय से शोक मिटा, तब जयद्रथ-बध की प्रतिज्ञा की और श्रीकृष्णचन्द्र जी की सहायता से प्रतिज्ञा पूरी की। पन्द्रहवें दिन भीम ने द्रोणाचार्य्य जी के पुत्र अश्वत्थामा को रथ समेत दूर फेंक दिया और अश्वत्थामा नामी हाथी को मार और युधिष्ठिर की गवाही दिलवा गुरु जी के दिल में जमा दिया कि तुम्हारे पुत्र की मृत्यु हो गई। इस पर दुखी हो गुरु जी ने हथियार रख दिये। तब धृष्टद्युम्न ने आ कर

गुरु जी का शिर काट लिया। अश्वत्थामा ने धृष्टद्युम्न का शिर काट बदला चुका लिया।

सत्रहवें दिन अर्जुन के हाथों कर्ण मारे गये।

अठारहवें दिन शल्य युधिष्ठिर के हाथ से मारे गये।

दुर्योधन युद्ध-भूमि से भाग कर तालाब में जा छिपा वहाँ लक्ष्मी जी ने उसके कन्धे पर बास किया मगर भीम, अर्जुन तथा कृष्णचन्द्र जी ढूँढ़ते २ वहाँ पहुँच गये। पुकार पुकार उसे पानी से बाहर निकाला।

भीम ने गदा द्वारा जाँघ तोड़ दुर्योधन का काम तमाम किया।

दुर्योधन की तरफ़ कृपाचार्य्य, कृतवर्म्मा व अश्वत्थामा बच रहे।

युद्ध का प्रथम दिन

पक्ष अर्जुन—

१—चालीस हज़ार राजा छत्रधारी तरफ़दार—अर्जुन ख़ुद सेनापति व सवारी रथ।

२—भीमसेन व सवारी रथ।

३—धृष्टद्युम्न राजा द्रुपद के पुत्र, द्रौपदी के भाई अग्नि-कुंड से जन्मे।

४—नकुल ५—सहदेव ६—युधिष्ठिर ७—सात्यकी ८—राजा विराट ९—द्रुपद राजा १०—शिखंडी ११—धृष्टद्युम्न १२—काशीराज १३—उत्तर कुँवर १४—घटोत्कच १५—शेख।

दुर्योधन का पक्ष

१—साठ हज़ार राजा छत्रधारी तरफ़दार, सेनापति भीष्मजी। भीष्म जी ने दस हज़ार महारथी नित्य मारने का प्रण किया था व अपनी सेना की रक्षा का प्रण किया था।

२—दुःशासन बडा बलवान था।
३—गुरु द्रोणाचार्य्य जी ।
४—जयद्रथ ५—शकुनि ६—शल्य ७—भूरिश्रवा ८—कृतवर्म्मा
९—भगदत्त १० वा ११—सोमदत्त १२ व १३—कृपाचार्य
१४—अलम्बुष १५—शिशु बंधु, अश्वत्थामा ।

नोट—नं० १ का मुक़ाबिला नं० १ से इसी सिलसिले से नं० १५ का मुक़ाबिला नं० १५ से हुआ ।

युद्ध का दूसरा दिन

पक्ष अर्जुन—

राजा विराट के पुत्र शंख सेनापति बनाये गये, इससे राजा विराट को भारी प्रसन्नता हुई कि उनका पुत्र राजा युधिष्ठिर के काम आया और सेनापति बनाया गया। जब शंख वीरगति को प्राप्त हुए तब राजा द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न सामना करने आये। ये भी अग्नि-कुंड से पैदा हुए थे। इस दिन जब तक अर्जुन ने अपना अग्नि बाण निकालने के लिये हृदय में ख़्याल किया उसी बीच भीष्म जी ने अपने प्रण के अनुसार दस हज़ार महारथियों को मार गिराया। अर्जुन भौचक्के से रह गये।

शंख के सारथी सात्यकी थे। सात्यकी ने शंख को युद्ध-भूमि से हटाना चाहा मगर शंख ने क्षात्र धर्म के अनुसार ऐसा नहीं करने दिया। युद्ध-भूमि में लड़ते लड़ते जान दे दी। शंख तुम धन्य हो। जिस काम के लिये अगुआ बनाये गये थे उसे ही सब से बड़ा काम समझा—अर्जुन ने शत्रु पक्ष के १००० राजा मार गिराये और ८४ युन घोड़े मार गिराये।

दुर्योधन का पक्ष—

भीष्म जी सेनापति थे। गुरु द्रोणाचार्य ने ब्रह्मबाण से शंख को मार गिराया। इस पर लोगों ने अप्रसन्नता प्रगट की कि पहिले तो

ब्राह्मणों को हथियार ही नहीं पकड़ना चाहिये उस पर बच्चे पर ब्रह्मास्त्र नहीं चलाना चाहिये था।

(युद्ध का तीसरा दिन)

अर्जुन का पक्ष—

१—धृष्टद्युम्न २—उत्तर कुँवर ३—सात्यकी ४—नकुल ५—सहदेव ६—घटोत्कच ७—राजा विराट ८—भीम ९—अर्जुन।

दुर्योधन का पक्ष—

१—२ गुरु द्रोणाचार्य ३—शल्य ४—५ कृपाचार्य्य ६—अलम्बुष ७—कृतवर्मा ८—९ भगदत्त।

नोट—पक्ष दुर्योधन में १—२ नंबर पर द्रोणाचार्य्य का नाम है—पक्ष अर्जुन में नम्बर १ पर धृष्टद्युम्न व नम्बर २ पर उत्तर कुँवर का नाम है। इससे प्रयोजन यह है कि धृष्टद्युम्न व उत्तर कुँवर ने मिलकर गुरु द्रोणाचार्य्य का सामना किया। इसी प्रकार और भी समझो—नम्बरों से नम्बर का मुक़ाबिला करके समझ लो कि किसका मुक़ाबिला किससे हुआ।

(युद्ध का चौथा दिन)

पक्ष अर्जुन—

१—भीम सेनापति २—धृष्टद्युम्न ३—सात्यकी ४—राजा विराट ५—अभिमन्यु ६—घटोत्कच।

पक्ष दुर्योधन—

१—भूरिश्रवा २—द्रोणाचार्य्य ३—शल्य ४—कृतवर्मा ५—अश्वत्थामा ६—अलम्बुष, नकुल आदि का सामना जयद्रथ से हुआ। इस युद्ध में घटोत्कच ने घोर युद्ध किया (नम्बरों का क्रम वैसा ही रहेगा) इस दिन अलम्बुष मारा गया।

(युद्ध का पाँचवाँ दिन)

भीष्म जी ने पर्वतास्त्र का प्रयोग किया तब अभिमन्यु, भीम, अर्जुन, सात्यकी, युधिष्ठिर, घटोत्कच कृष्णचन्द्र जी को

छोड़ शेष पांडवी सेना युद्ध से विमुख हो भाग गई। यह देख अर्जुन को अपार क्रोध हुआ और उन्होंने घोर युद्ध करके सहस्रों वीरों को मार गिराया।

(युद्ध का छठवाँ दिन)

पक्ष अर्जुन—

१—सहदेव २—नकुल ३—धृष्टद्युम्न ४—अभिमन्यु—

पक्ष दुर्योधन—

१—शकुनि २—जयद्रथ ३—भूरिश्रवा ४—द्रोणाचार्य्य

(युद्ध का सातवाँ दिन)

पक्ष अर्जुन—

१—अभिमन्यु २—द्रुपद ३—नकुल ४—विराट ५—सहदेव ६—युधिष्ठिर ७—भीम

पक्ष दुर्योधन—

१—अश्वत्थामा २—भूरिश्रवा ३—जयद्रथ ४—द्रोणाचार्य ५—शकुनि ६—कृपाचार्य ७—कलिंग-नरेश।

इस दिन के युद्ध में श्रीकृष्ण जी के दिये हुए बल से बलवान हो कर भीम ने कलिंग-नरेश को उसके ९९ भाइयों समेत मार डाला और इतने हाथी मार डाले कि उनके इधर उधर फेंक देने से आकाश-मंडल भर गया। भीमसेन के फेंके हाथी दूर दूर जाकर गिरे। भीम के ऐसे पराक्रम को देख कर कौरवी सेना भौचक्की रह गई।

(युद्ध का आठवाँ दिन)

दुर्योधन ने भीष्म जी से कहा कि मैंने आप को बराबर ही पूज्य जाना, हर प्रकार से आपकी प्रतिष्ठा की परन्तु आप पांडवों पर दया करते हो इसीलिये संकोच के साथ युद्ध करते हो। यदि

मैं जानता कि आप इस प्रकार संकोच के साथ युद्ध करोगे तो कर्ण को आगे करके पांडवों को परास्त कर देता। भीष्म जी को दुर्योधन की ये बातें बुरी लगीं। उन्होंने कहा कि मैं तो प्राण पण से युद्ध करता रहता हूँ फिर भी तुम यही कहते हो। अच्छा है, मैं कल महाकाल नामक शर से पांडवी सेना का नाश कर डालूँगा। सहदेव ने शकुन-परीक्षा द्वारा ये हाल जान लिया और युधिष्ठिर से कह दिया। श्रीकृष्णचन्द्र जी ने अर्जुन को भेज दुर्योधन का मुकुट मँगवा लिया और अर्जुन को दुर्योधन के वेष में भीष्म जी के पास भेज बाण मँगवा लिया और पांडवों को सेना समेत मृत्यु के मुख से बचा लिया। इसका कुछ हाल पहिले भी कहा जा चुका है।

(युद्ध का नवाँ दिन)

कोई विशेष घटना नहीं हुई।

(युद्ध का दसवाँ दिन)

भीष्म जी के नौ दिन के युद्ध से पांडव लोग घबड़ा गये। पाँचो भाई पांडव श्री कृष्णचन्द्र जी को लेकर भीष्म जी के पास गये और कहा कि आप के रहते विजय मिलना तो दूर रहा, सेना का संहार हो रहा है। इसलिये लड़ाई त्याग बन जाना उचित है तब भीष्म जी ने कहा कि मेरे हाथ में हथियार रहते कोई मुझे मार नहीं सकता। यदि मुझे मारना चाहते हो तो शिखंडी को आगे करके आओ मैं उस पर हथियार न चलाऊँगा। पांडवों ने शिखंडी को आगे किया और अर्जुन ने इस अवसर पर भीष्म जी के रोम रोम में बाण वेध दिया। आख़िर भीष्म जी बाणों से बिध कर पृथ्वी पर गिर गये और शरीर में बिधे बाण ही उनकी शर-शय्या बन गये देवताओं के कहने पर उन्होंने उत्तरायण सूर्य्य होने पर शरीर छोड़ने का विचार किया। सब लोग भीष्म जी के पास

पहुँचे और दुखी हुए। भीष्म जी का शिर लटका हुआ था। तब उन्होंने तकिया के लिये कहा। दुर्योधन ने अनेक तकिया मँगाये। भीष्म जी ने हँस कर अर्जुन की ओर देखा तो उन्होंने बाणों को शिर में वेध तीन बाणों का तकिया दिया। इसी प्रकार प्यास लगने पर दुर्योधन ने ठंडा पानी मँगवाया। मगर उन्होंने अर्जुन से प्यास बुझाने को कहा। तब उन्होंने बाण से पाताल गंगा की धार निकाल भीष्म जी को पानी पिलाया। अब उन्होंने दुर्योधन को सुलह करने की सलाह दी, मगर मूढ़मति दुर्योधन ने कर्ण के भरोसे कुछ ध्यान न दिया। आज के दिन बहुत से अपशकुन हुए जैसे कि बिना बादलों के जल बरसना आदि। भीष्म जी का गिरना सुन धृतराष्ट्र ने बड़ा शोक किया।

(युद्ध का ग्यारहवाँ दिन)

भीष्म जी जब शर-शय्या पर पड़ गये तब ग्यारहवाँ दिन सेनापतित्व का मुकुट गुरु द्रोणाचार्य्य के माथे बाँधा गया। गुरु जी ने अर्जुन को दूर हटा युधिष्ठिर को पकड़ विजय-पत्र लिखवा लेने का विचार किया। गुरु द्रोण के सामने युधिष्ठिर ठहर न सके, भागे। इनकी सहायता में शूरसेन गुरु जी के हाथों मारे गये तब गुरु जी नागपाश ले, उन्हें बाँधने दौड़े तब अर्जुन ने श्री कृष्णचन्द्र जी की आज्ञानुसार दस योजन दूर से बाण चलाये। गुरु जी अर्जुन के आ जाने के भ्रम में पड़ गये और युधिष्ठिर बच गये।

पक्ष अर्जुन—

१—काशीराज २—नकुल ३—विराट ४—सहदेव ५—शिखंडी ६—भीमसेन ७—द्रुपद ८—अभिमन्यु ९—सात्यकी १०—युधिष्ठिर ११—धृष्टद्युम्न

पक्ष दुर्योधन—

१—दुर्योधन २—कृपाचार्य्य ३—सुशर्मा ४—शकुन ५—सोमदत्त ६—द्रोण ७—जयद्रथ ८—कर्ण ९—१०—११—भूरिश्रवा

इस दिन अन्त में अभिमन्यु व जयद्रथ में घोर युद्ध हुआ। अभिमन्यु ने जयद्रथ नाक में दम कर दिया।

(युद्ध का बारहवाँ दिन)

युद्ध का यह दिन यहाँ भारत के इतिहास में प्रसिद्ध है। इसी दिन चक्रव्यूह रचा गया। अर्जुन को दूर ले जाकर युद्ध में फँसाया गया। द्रोणाचार्य्य, प्रद्युम्न व अर्जुन के सिवा चक्रव्यूह का भेदना किसी को न आता था। पांडवी सेना चक्रव्यूह की रचना सुन हैरान हुई। अभिमन्यु ने गर्भ समय में चक्रव्यूह का वर्णन अपने पिता द्वारा सुना था छः द्वार का बेध सुना। जब सातवें द्वार का वर्णन प्रारम्भ हुआ उसी समय अभिमन्यु का जन्म हो गया। इसलिये सातवें द्वार का वर्णन अभिमन्यु ने सुन नहीं पाया। भीम ने कहा कि अभिमन्यु भीतर घुसे हम लोग साथ रहेंगे सेना तय्यार होकर चली। प्रथम द्वार पर जयद्रथ था अभिमन्यु तो द्वार बेध भीतर घुसा मगर महादेव जी के बरदान के प्रभाव से और कोई न जा सका। छः द्वार अभिमन्यु ने बेध डाले कोई वीर अभिमन्यु की गति न रोक सका। सातवें द्वार पर सब ने मिल कर घेर लिया और हथियार रहित करके अभिमन्यु को मार डाला। पांडवी सेना में शोक छा गया। अर्जुन ने जब सुना, बहुत दुखी हुए और बन जाने को तैयार हुए आखिर कृष्णचन्द्र जी अर्जुन को ले बैकुंठ गये। वहाँ जा असली हाल जान मन में धीरज रक्खा। बैकुंठ से लौट अर्जुन ने प्रण किया कि यदि कल शाम तक जयद्रथ का बध न कर डालूँ तो भस्म हो जाऊँ। ऐसा कठोर प्रण सुन जयद्रथ बहुत व्याकुल हुआ और भागने के लिये तय्यार हो गया,

परन्तु गुरु जी ने समझा-बुझा कर जाने से रोक लिया। रात में अर्जुन ने महादेव जी को प्रसन्न कर जयद्रथ के मारने का उपाय पूछ लिया।

(युद्ध का तेरहवाँ दिन)

आज भी गुरु जी ने बड़ा विकट व्यूह रचा और जयद्रथ को ऐसे स्थान पर रक्खा कि मनुष्य की तो गिनती क्या देवराज इन्द्र भी न पहुँच सके। गुरु जी स्वयं द्वार पर रहे और कहा कि मैं आज द्वार होकर किसी को भी न जाने दूँगा। अर्जुन आये तथा गुरु जी का प्रण सुन दूसरे मार्ग से चले गये। थोड़ी देर पीछे युधिष्ठिर के भेजे सात्यकी आये वह भी गुरु जी से युद्ध छोड़ अर्जुन के मार्ग पर गये अर्जुन भीतर घुसे और ऐसा घोर युद्ध किया कि बड़े २ बीरों के छक्के छूट गये। कौरवी सेना में हाहाकार मच गया। थोड़ी देर पीछे युधिष्ठिर के भेजे भीम आये। गुरु जी ने द्वार में जाने से रोका तब भीमसेन ने गुरु जी का रथ उठाकर दूर फेंक दिया और स्वयं द्वार में होकर घुस गये और बड़ा घोर युद्ध करने लगे। मंदराचल के समान कौरवी सेना रूपी सागर को मथने लगे। आखिर युद्ध करते करते अर्जुन के रथ के घोड़े घायल हुए तथा थक गये तब बाण द्वारा अर्जुन ने पाताल गंगा का पानी निकाल थल पर सरोवर बना दिया। कृष्णचन्द्र जी ने घोड़ों के अस्त्र निकाले, उन्हें नहलाया, पानी पिलाया जिससे घोड़े फिर स्वस्थ हो गये। अर्जुन ने बाणों का घेरा डाल दिया जिससे कोई शत्रु आगे न बढ़ सका। धन्य अर्जुन व धन्य तुम्हारी बाण-विद्या। आखिर तीसरा पहर हुआ पर जयद्रथ का कहीं पता न चला तब सुदर्शन चक्र द्वारा सूर्य्य को ढक संध्या हो जाने का भ्रम फैला श्रीकृष्णचन्द्र जी ने अर्जुन के हाथों जयद्रथ का बध करवा डाला। जयद्रथ का

शिर पिता सुरथ के हाथों में डाल बेटा व बाप दोनों को ही ले डाला। भूरिश्रवा ने सात्यकी का धनुष काट पृथ्वी पर पटक तलवार ले शिर काटना चाहा। इसी समय अर्जुन ने भूरिश्रवा के हाथ काट दिये तब सात्यकी ने उठ भूरिश्रवा के शिर काट लिया। इस पर अर्जुन बहुत अप्रसन्न हुए। श्री कृष्णचन्द्र जी की सहायता से अर्जुन की प्रतिज्ञा पूरी हो गई नहीं तो बड़ा टेढ़ा काम था। गुरु जी का बनाया व्यूह बड़ा ही पेचीला था। आज रात में भी युद्ध चलता रहा। राजा द्रुपद गुरु द्रोणाचार्य्य के हाथों मारे गये। तेरहवें दिन के युद्ध में सोमदत्त, जल सिंधु, भूरिश्रवा, काम्बाज मारे गये। इस युद्ध में एक ओर अर्जुन, सात्यकी भीम और सहदेव थे। दूसरी ओर सोमदत्त जल-सिंधु, भूरिश्रवा, कृपाचार्य्य, कर्ण, विकर्ण, दुशासन और शकुनि थे। आज अर्जुन का सामना अनेकों से हुआ।

(युद्ध का चौदहवाँ दिन)

आज गुरु द्रोणाचार्य्य ने मंत्रित करके एक कवच दुर्योधन को दिया जिसके प्रभाव से दुर्योधन के शरीर में अर्जुन के बाण विध न सके। कोई विशेष घटना नहीं हुई। आज अर्जुन, भीम, नकुल, धर्म-पुत्र, धृष्टद्युम्न, काशीराज का सामना द्रोण, कर्ण, कृपाचार्य्य, शल्य, दुःशासन से हुआ।

(युद्ध का पन्द्रहवाँ दिन)

श्री कृष्णचन्द्र जी ने आज अश्वत्थामा को भीम के हाथ से रथ समेत दूर फेंकवा दिया। वह देवासु में शिव जी के मन्दिर के पास जाकर गिरा तब शिव जी ने जल पिला उन्हें सावधान किया व द्रोण की प्रार्थना पर ३ घंटे युद्ध-भूमि में पहुँचाया। कृष्ण जी ने अश्वत्थामा नामी हाथी को मरवा युधिष्ठिर की गवाही दिलवा गुरु जी को अपने पुत्र के मारे जाने का विश्वास करा

दिया। गुरु जी ने दुखी हो हथियार रख दिये तब धृष्टद्युम्न ने गुरु जी का शिर काट लिया। अश्वत्थामा ने लौट कर यह हाल सुना और क्रोध में भर बड़ा घोर युद्ध किया।

(युद्ध का सोलहवाँ दिन)

आज कर्ण सेनापति बनाये गये। इन्होंने ब्राह्मण बन परशुराम से विद्या पढ़ी। जब यह बात परशुराम जी ने जान ली तब इनको ५ बाण दे विदा किया और कहा कि यदि ये बाण तुम्हारे हाथ से निकल गये तभी अपनी पराजय समझना। ये बाण कुन्ती ने माँग लिये। इन्द्र अमोघ शक्ति दे कर्ण का कवच-कुण्डल माँग ले गये। घटोत्कच ने जब घोर युद्ध करके कौरवी सेना को जान संकट में डाल दी तब कर्ण ने विवश हो अमोघ शक्ति द्वारा घटोत्कच को मार गिराया। जब तक अमोघ शक्ति कर्ण के हाथ रही तब तक श्रीकृष्णचन्द्र जी ने अर्जुन को कर्ण से दूर रक्खा। शक्ति इन्द्र के पास गई, उसको आकाश-मार्ग में हो कर इन्द्र के पास जाते देख कृष्णचन्द्र जी भी रथ ले कर कर्ण के सामने पहुँच गये। अब कर्ण व अर्जुन में घोर युद्ध हुआ। घटोत्कच की मृत्यु पर भीमसेन को भारी दुख हुआ; परन्तु श्री कृष्णचन्द्र जी ने समझा-बुझाकर शान्त किया।

(युद्ध का सत्तरहवाँ दिन)

कर्कोटक सर्प का पुत्र चंचुकि अपनी माँ का बदला चुकाने आया, जिसको खांडवबन के दाह के समय अर्जुन ने पीड़ित किया था। कर्ण ने उसको बाण पर रख कर चलाया। श्रीकृष्णचन्द्र जी ने हनूमान जी की सहायता से रथ को पाताल में पहुँचाया। सर्प ने लौट कर कर्ण से कहा कि मैंने अर्जुन को रथ समेत निगल लिया है। शल्य ने कहा ये बात झूठ है। तब सर्प व कर्ण ने एक दूसरे को क्रम से नरक में जाने व मृत्यु होने का श्राप दिया

अर्थात् कर्ण ने सर्प को नरक में जाने का व सर्प ने कर्ण को मृत्यु हो जाने का श्राप दिया। कर्ण को सर्प के भूठ होने पर क्रोध आया व सर्प को श्राप मिलने पर क्रोध आया। सर्प कर्ण की ओर से निराश होकर पुराने बैर को याद कर अर्जुन पर झपटा मगर अर्जुन ने उसे मार गिराया। कर्ण ने दुर्वासा ऋषि का दिया बाण चलाया, कृष्णचन्द्र जी ने रथ को नीचे गिरा अर्जुन को बचा लिया उनका मुकुट कट गया। कर्ण व अर्जुन का भारी युद्ध हुआ। कर्ण के रथ का पहिया कीचड़ में घुस गया। कर्ण रथ से नीचे उतरे और पहिया निकालने में लगे। इसी समय कृष्णचन्द्र जी के अनुरोध से अर्जुन ने कर्ण को मार गिराया। कुछ हो कर्ण धीर बीर, दानी व धुरंधर था। पाँच बाण कुन्ती ने माँग लिये जो परशुराम जी से मिले थे व कवच कुंडल इन्द्र ने माँग लिये तब जाकर कहीं कर्ण का बध हुआ। उधर भीम ने दुःशासन को पृथ्वी पर पटक दिया और कहा कि मैं इसका रक्तपान करूँगा। यदि कोई रक्षा करना चाहे, करे। इस पर अर्जुन रक्षा करने को तैयार हो गये; परन्तु श्री कृष्णचन्द्र जी ने समझौता करा दिया। नकुल द्रौपदी को लेकर युद्ध-भूमि में पहुँचे। द्रौपदी ने दुःशासन की बाँहों के रक्त से १३ साल के बिखरे बाल विधवा की भाँति खुले हुए बाँधे। भीम ने दुःशासन की बाँहों का रक्त पान किया। कर्ण के मारे जाने में परशुराम, कुन्ती, पृथ्वी, कृष्णचन्द्र जी, अर्जुन और इन्द्र शामिल रहे।

(युद्ध का अठारहवाँ दिन)

अब शल्य सेनापति हुए। इस दिन सहदेव के हाथ शकुनि का दुर्योधन के हाथ से शिखंडी का व युधिष्ठिर के हाथ से शल्य का बध हुआ। सात ताल के बराबर लोहू बह चला। अब दुर्योधन वहाँ से चलकर तालाब पर पहुँचे और जल-स्तम्भन विद्या के प्रभाव

से पानी में घुस बैठे। कृष्णचन्द्र जी युधिष्ठिर, भीम व अर्जुन को साथ ले बहेलिये के द्वारा पता लगा सरोवर पर पहुँचे। भीम ने दुर्योधन को ललकारा। लक्ष्मी जी ने रोका कि अभी मत जाओ मैं तुम को सेना दूँगी उसके सहारे शत्रु पर विजय प्राप्त कर लेना। भीम ने जब बहुत कड़ुवी बातें कहीं तब दुर्योधन सह न सके और तालाब से बाहर आ गये। इनकी माँ गांधारी आँखों पर पट्टी बाँधे रहती थी। जब दुर्योधन युद्ध के लिये चला तब गांधारी ने कहा कि नंगे होकर मेरे सामने आओ। दुर्योधन शरमा गया व लंगोट बाँध कर आया। गांधारी ने कहा कि तुम्हारा सारा बदन अमर हो गया। केवल कमर कमज़ोर रह गई। यही कमर तोड़ भीम ने मारा। भीम ने गदा द्वारा दुर्योधन की जाँघें तोड़ दीं। दुर्योधन के पैरों में कमल के चिन्ह थे; इन्हीं चिह्नों के सहारे ये ढूँढ़ लिये गये। दुर्योधन की प्रतिज्ञा देख लक्ष्मी जी ने इसके कंधे पर बसेरा किया। बड़े ही वाद-विवाद के पीछे भीम व दुर्योधन का युद्ध तय हुआ। इस पर दुर्योधन ने कहा कि भीम राजा नहीं है। यदि युधिष्ठिर भीम को शिर झुकावें तो मैं उनसे युद्ध करूँगा। अन्त में कृष्णचन्द्र जी की सलाह से भीमसेन ने हरिवंश पुराण को बगल में दबाया तब युधिष्ठिर ने भीम के आगे शिर झुकाया। इसके बाद भीम व दुर्योधन में गदा-युद्ध हुआ। भीम ने कृष्णचन्द्र जी का इशारा पा दुर्योधन की जाँघ तोड़ डाली। इस प्रकार दुर्योधन की मृत्यु हुई। अब अश्वत्थामा, कृपाचार्य्य और कृतवर्मा ढूँढ़ने २ तालाब पर पहुँचे। वहाँ दुर्योधन की दशा पर तीनों को दुःख हुआ। अश्वत्थामा ने शत्रुओं पर विजय पाने का प्रण किया तब दुर्योधन ने रक्त का तिलक कर अश्वत्थामा को सेनापति बना दिया। अश्वत्थामा, कृपाचार्य्य व कृतबर्म्मा तीनों मिलकर पांडवी सेना की छावनी में पहुँचे। द्वार पर शिव जी रक्षक थे। उन्होंने अश्वत्थामा को द्वार पर हो कर जाने नहीं दिया। अंत में

अश्वत्थामा ने शिव जी को प्रसन्न किया तब उन्होंने डेरे के पीछे हो कर जाने की आज्ञा दी। अश्वत्थामा डेरे के पीछे हो घुसा और सोती हुई पांडवी सेना का धृष्टद्युम्न आदिक बचे हुए वीरों समेत बध कर डाला। इसी हत्याकांड में पांडवों के पांचो पुत्र भी मारे गये। अश्वत्थामा ये पाँचों शिर ले दुर्योधन के पास गया। दुर्योधन ने दूर से देख कर जाना कि पांडवों के शिर हैं तो बहुत ख़ुश हुआ। मगर जब पास से देख कर जाना कि ये पाण्डु-पुत्रों के शिर हैं तो बहुत दुखी हुआ। इसी दशा में दुर्योधन के प्राण चले गये। दुर्योधन के लिये यह बरदान था कि सुख दुख बराबर होने पर प्राण निकलेंगे। अश्वत्थामा ने जब यह जाना कि पांडव लोग बच गये तब वह डरकर बद्रिकाश्रम की ओर भागा। द्रौपदी के बिशेष आग्रह से पांडवों ने पीछा किया तब बड़ी खोज के बाद अश्वत्थामा को पाया। अश्वत्थामा ने ब्रह्मास्त्र चला दिया तब कृष्णचन्द्र जी ने पांडवों की रक्षा की। अर्जुन अश्वत्थामा को बाँध लाये और द्रौपदी के सामने खड़ा किया तब द्रौपदी के कहने से मणि ले कर अश्वत्थामा को छोड़ दिया गया। इस प्रकार युद्ध की कथा समाप्त हुई। गांधारी ने कृष्णचन्द्र जी पर कोप कर श्राप दे दिया कि जिस प्रकार तुमने कौरव-वंश का नाश कराया उसी प्रकार तुम्हारा यदुवंश भी नाश को प्राप्त होगा। युद्ध के ३६ साल पीछे ऐसा ही हुआ। युद्ध क्या हुआ भारत को ग़ारत कर गया। पांडवों में सिर्फ़ पाँच पांडव व कौरवों में अश्वत्थामा, कृपाचार्य्य व राजा कृतबर्मा बचे। कृष्णचंद्र जी लीला पुरुषोत्तम थे वह भी बचे रहे।

(भीष्म जी का वर्णन)

देवताओं की श्रेणी में आठ बसु भी हैं। बसुओं ने वशिष्ठ की नन्दिनी नाम की गऊ चुरा ली इस पर बसुओं को मृत्युलोक में
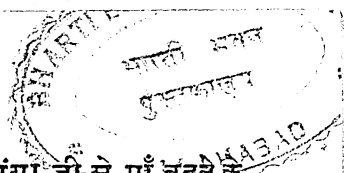
जन्म लेने का श्राप मिला तब वसुओं ने गंगा जी से माँ बनने के लिये कहा। उन्होंने बड़ी खींच-तान के बाद स्वीकार किया। गंगा जी ने बहुत सुन्दर रूप धर राजा शान्तनु को अपना पति बनाया। राजा ने शिकार खेलते हुए गंगा-तट पर इनको देखा और इनसे अपनी पत्नी बनने को कहा। गंगा जी ने कहा कि मैं जो कुछ करूँ उसमें बाधा न डालना। यदि यह स्वीकार हो तो मैं तुम्हारी पत्नी बनने को तैयार हूँ। राजा के स्वीकार करने पर शान्तनु का गंगा जी के साथ विवाह हो गया। गंगा जी के गर्भ से जो बालक उत्पन्न होता था उसे गंगा जी पानी में फेंक दिया करती थीं। प्रण के अनुसार राजा कुछ नहीं कह सकते थे। सात पुत्रों की यही दशा रही। जब आठवाँ पुत्र हुआ तब राजा ने कहा कि यह पुत्र हमें दे दो, हम इस पुत्र को पानी में न डालने देंगे। प्रण के टूटने पर गंगा जी चली गईं और पुत्र को कुछ दिन बाद देने के वादे पर लिये गईं उन्होंने पुत्र को ले जाकर शिक्षा दी तत्पश्चात् राजा को सौंप दिया। इस समय इनका नाम देवव्रत था। जब राजा ने धीवर की कन्या मच्छोदरी को देखा उससे विवाह करना चाहा। यह वही मच्छोदरी है कि जिसके गर्भ तथा पाराशर के संयोग से व्यास जी की उत्पत्ति हुई। पाराशर ने मच्छोदरी को नवयोवना रहने व सुगंधित बदन रहने का वरदान दिया। राजा शान्तनु ने मच्छोदरी के पिता से विवाह की इच्छा प्रकट की। उसने कहा कि यदि इसके गर्भ से पैदा हुआ पुत्र राज्य पावे तो मैं विवाह कर दूँ। राजा ने इस बात को नहीं माना। जब राजा को दुखी देख देवव्रत ने सारा समाचार जाना तो मच्छोदरी के पिता के पास पहुँच अपने राज्य छोड़ने की प्रतिज्ञा की और उससे विवाह कर देने को कहा। मच्छोदरी के पिता ने कहा कि आप गद्दी पर न बैठेंगे तो आपकी सन्तान गद्दी पर बैठेगी मेरे दौहित्र (लड़की के लड़के) तब भी गद्दी न पा सकेंगे। इस पर

देवव्रत ने दूसरी प्रतिज्ञा यह की कि मैं अपना विवाह न करूँगा तुम मच्छोदरी का विवाह मेरे पिता के साथ कर के पिता का दुख दूर करो। आख़िर मच्छोदरी का विवाह राजा शान्तनु से हो गया। ऐसी भीषण प्रतिज्ञा करने के कारण देवव्रत का नाम भीष्म पड़ गया। राजा ने ऐसा पितृ-प्रेम देख इनको इच्छा-मृत्यु का बरदान दिया। काशीराज की कन्याओं को लाना, परशुराम से युद्ध, विराट नगरी में अर्जुन के चलाये मोहन बाण से मोहित न होना, महाभारत के युद्ध में दुर्योधन की ओर से सेनापति हो कर दस दिन तक युद्ध करना, नित्य दस हज़ार महारथियों को मारना, स्नेह के कारण पांडवों को हानि न पहुँचाना, दसवें दिन अपने बतलाये उपाय से युद्ध-भूमि पर गिर शरशय्या पर रहना, उत्तरायण सूर्य्य होने पर शरीर त्यागना, शरशय्या पर गिरने तथा मृत्यु के बीच में पांडवों का भीष्म जी के पास जाना व उनका उपदेश सुनना, कृष्णचन्द्र जी को हथियार पकड़ा देना इनके बड़े २ काम हैं। यह ५८ दिन शरशय्या पर रहे और माघ सुदी ८ को शरीर छोड़ा। भीष्म जी तुम धन्य हो। भारत बसुन्धरा के यश हो। वीरों में अग्रणी हो। तुमने नीचे लिखा प्रण पूरा किया कि :—

जो मैं हरिहिं न अस्त्र गहाऊँ।
लाजौं मैं गंगा जननी को शान्तनु-सुत न कहाऊँ॥
धनुष बाण ले उठ कर बैठूँ विषम बाण बरसाऊँ।
रुण्ड मुंड मय मेदिनि कर के हाहाकार मचाऊँ॥
कृष्णचन्द्र हथियार हाथ लें उन्हें देखि हरषाऊँ।
यदि न करौं ऐसे तो कबहूँ क्षत्रिय गतिहि न पाऊँ॥

पाठकों पर प्रगट ही है कि भीष्म ने ऐसा घोर युद्ध किया कि जिसके मारे विकल हो श्री कृष्णचन्द्र जी सुदर्शन चक्र ले दौड़े।

आखिर अर्जुन ने दौड़ कर पैर पकड़ कर कृष्णचन्द्र जी को लौटाया ऐसे भीष्म जी की याद में नीचे की बातें याद रखिये :—

उसी हक़ पै ईमान लाये हुए हैं।
जो खुदसा दुई का मिटाये हुए हैं॥
कोई रूप हो उसकी हय्यत न बदले।
कुल आलम में इकसाँ समाये हुए हैं॥
ये माना कि वो दम में न आये किसी के।
पै हम उनको दम पै चढ़ाये हुए हैं॥
मुनी ध्यान धूनी रमाये हुए हैं।
इबादत की दौलत कमाये हुए हैं॥
वो दिल ही में दिलदार को ढूँढ़ते हैं।
बियाबाँ में आसन जमाये हुए हैं॥
निराकार कहते जिसे वेद चारों।
उसी ब्रह्म से लौ लगाये हुए हैं॥
जो बन्दे हैं दुनिया के गन्दे सरासर।
वो फन्दे में ख़ुद को फँसाये हुए हैं॥
वो आज़ाद क्योंकर हो दुनिया से निर्भय।
जो हुक्मे सरासे डराये हुए हैं॥

दुर्योधन का जीवन-चरित्र

जब गान्धारी के पेट में गर्भ को लगभग १ साल के हो गया तब गान्धारी ने घूँसे मार मार कर गर्भ को बाहर निकाल लिया। मांस का एक गोल पिण्ड निकला। गान्धारी ने इस गोल पिण्ड को फेंक देना चाहा, मगर व्यास जी आये और उन्होंने मांस-पिंड के १०१ भाग करवा के एक एक घृत के पात्र में एक एक खंड रखवा दिया और सब पात्रों के मुँह बन्द करवा दिये। थोड़े दिन बाद हर पात्र से एक एक शरीर प्रकट हुआ। इस प्रकार १००

पुत्र व १ कन्या का जन्म हुआ। इन पुत्रों में सब से बड़ा दुर्योधन था। इसके जन्म के समय बहुत अशकुन हुए। इसके बड़े २ काम ये हैं:—

१—भीम को विष दे गंगा में डाल दिया।

२—लाख का भवन बनवा कर पांडवों को जला देना चाहा, मगर वह बच गये।

३—जब अर्जुन ने द्रौपदी को जीत लिया तब दुर्योधन ने खिसिया कर द्रौपदी को छीनना चाहा, मगर सफल न हुआ।

४—पांडवों की सभा को देखते हुए धोखा खा कर अपनी हँसी कराई और हँसी से बड़ा दुखी हुआ।

५—मामा शकुनि द्वारा जुआ के खेल में पांडवों को हरा कर राज्य-पाट तथा पांडवों को द्रौपदी-समेत जीता। द्रौपदी को नंगी जाँघ पर बैठाना चाहा, परन्तु कृष्णचन्द्र जी ने लाज रख ली, इसी खेल में पांडवों को वन मिला।

६—वन में पांडवों को अपना बड़प्पन दिखाने गया, मगर गन्धर्वों के हाथ पड़ गया और अर्जुन की सहायता से छूटा। लज्जित हो घर लौटा। इसी समय अर्जुन से वरदान माँगने को कहा, उन्होंने अवसर पड़ने पर माँग लेना कहा। युद्ध के समय अर्जुन ने मुकुट माँग अपना काम चलाया।

७—जब पांडव गुप्त वास कर रहे थे तब दुर्योधन ने पता चलाने की बड़ी भारी कोशिश की, मगर सब बेकार रही।

८—जब कीचक के मारे जाने की खबर दुर्योधन को मिली और इधर पांडवों का पता न चला तब विराट राजा को जीत लेने की इच्छा से दुर्योधन ने विराट नगरी पर चढ़ाई कर दी वहाँ पांडवों के हाथ से पराजय पाई।

९—वनवास का समय बीतने पर पांडवों ने श्री कृष्णचन्द्र जी को दूत बनाकर भेजा, मगर कृष्णचन्द्र जी के उपदेश का प्रभाव पांडवों के शत्रु दुर्योधन पर कुछ भी न पड़ा।

१०—युद्ध में भीम के हाथ से इसके सब भाई धीरे धीरे मारे गये। अन्त में दुर्योधन भी मारा गया। कुछ भी हो दुर्योधन ने अच्छा नहीं किया। इस ने राज्य-प्रबन्ध अच्छा किया। प्रजा प्रसन्न थी, परन्तु पांडवों के साथ अन्याय किया और राज्य के अभिमान में फँसकर किसी की बात न मानी। कर्ण के बल में भूल कर बन्धु-विरोध बढ़ाया, जिसके फल-स्वरूप अपना ही नहीं सारे देश भारत का नाश किया। यदि उस समय के वीरों का एक साथ नाश न हो गया होता तो आज बहुत सी वीर सन्तानें देश का मुख उज्ज्वल करतीं।

एक कवि ने कहा है कि:—

कौरव पांडव जानिबो, क्रोध क्षमा की सीम।
पाँचहिं मार न सौ सके, सबै निपाते भीम॥

युद्ध के पीछे का वर्णन

युधिष्ठिर ने अश्वमेध यज्ञ किया। भीम राजा यौवनाश्य के यहाँ से घोड़ा लाये। अर्जुन लंका से सोना लाये, जिसका खंभ हनूमान जी ने समुद्र में फेंक दिया था, जिसको मछली निगल गई थी। घोड़े की रक्षा में अर्जुन गये। मार्ग में बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ पड़ीं, जिनका वर्णन अलग अलग हो चुका है।

राह में एक शिला मिली, जिसके कारण घोड़े को आगे मार्ग न मिला। उद्दालक मुनि की स्त्री शाप-वश शिला हो गई थी। एक स्थान पर एक ऐसा तालाब मिला, जहाँ पर घोड़ा शेर बन गया, मगर रक्तवर्ण ऋषि के आशीर्वाद से फिर ज्यों का त्यों हो गया। आगे बंग देश मिला। इसके आगे एक ऐसा स्थान मिला, जहाँ स्त्रियाँ ही थीं। एक गंधर्व ने श्राप दिया था कि यहाँ आकर जो स्त्रियों से विषय करेगा, वह ३० दिन के अंदर मर जावेगा। इसलिये वहाँ कोई पुरुष न था। आकाशवाणी सुन कर अर्जुन

ने स्त्रियों से मित्रता कर ली। आगे बढ़ कर कई देशों को पार करते हुए लड़ते-भिड़ते मनोपुर पहुँचे। वहाँ का वर्णन आ चुका है। इसके बाद उलूपी वग़ैरह हस्तिनापुर आ गईं। फिर वीरवर्म्म व चंद्रहास से क्रमागत युद्ध हुआ। बकडालव ऋषि ने हज़ारहों साल तपस्या की, मगर मकान न बनाया। बदन पर घास वग़ैरह जम गई। अर्जुन ने इनको देखा व पूछा कि आपने मकान क्यों नहीं बनाया? जवाब मिला कि ज़िन्दगी चंदरोज़ा है। एक बार इनको अपनी तपस्या का अहंकार हुआ तो इनको ४ व ८ व १६ व ३२ व ६४ व १०० मुख के ब्रह्मा नज़र आये, जो हवा में उड़ जाते थे। आगे चल कर यज्ञ का घोड़ा समुद्र में चला गया और कृष्णचंद्र जी रथ पर चढ़ साथियों समेत पार हुए। जल के जीव श्रीकृष्णचंद्र जी के दर्शनों को आये उन्हीं के ऊपर होकर रथ चला गया। अब सब सिंधु देश पहुँचे। जयद्रथ का पुत्र अर्जुन का आना सुन मारे भय के मर गया। जब उसकी माता पुत्र को ले श्रीकृष्णचंद्र जी के पास आई तब कृष्णचंद्र जी ने उसे जीवित कर दिया। अन्त में वशिष्ठ जी, कृष्णचंद्र जी, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, भीम, मोरध्वज, यौवनाश्व, नीलध्वज, मयराज-गान जल लाये जिसको घोड़े ने पिया। राजा व रानी ने उसी जल में स्नान किया। अब धौम्य जी के आदेशानुसार घोड़े का कान काटा गया, जिससे दूध की धार निकली। फिर भीम ने घोड़े के दो टुकड़े कर दिये। सिर आकाश को गया व शेष भाग चन्दन का कपूर बन गया, जो यज्ञ में काम आया। घोड़े का तेज श्रीकृष्णचंद्र जी के बदन में समा गया। इस यज्ञ से युधिष्ठिर को अहंकार हुआ तो एक नेवला आया कि जिसका आधा बदन सोने का था। वह यज्ञ की राख में लोटता था और बदन को बार बार देखता था। युधिष्ठिर को आश्चर्य हुआ। कृष्णचंद्र जी ने कहा कि एक ब्राह्मण ने स्त्री, पुत्र व पुत्र-वधू सहित कई लंघन

किये। एक दिन थोड़ा सा भोजन मिला था तब तक एक अतिथि आ गया। सब ने अपना २ भाग उसे दिया, खुद भूखे रह गये वहीं बचे-खुचे जूठन के टुकड़े खा नेवले का आधा बदन सोने का हो गया, मगर इतने भारी यज्ञ से कुछ न हुआ। नारद जी व ब्रह्मा जी ने आकर श्रीकृष्णचंद्र जी से कहा कि अब कलियुग आ गया है, देह का त्याग होना चाहिये। कलियुग आप के कारण रुका है आ नहीं सक्ता। कलियुग के आने की पहिचान यह हुई कि एक स्थान पर गड़ा धन निकला। जिस स्थान पर यह धन निकला वह एक दूसरे मनुष्य के हाथ बेच डाला गया था। दोनों ने धन लेने से इन्कार किया, मगर कलियुग के आने पर दोनों ही धन पाने की इच्छा करने लगे और एक दूसरे पर बेईमानी करने का दोष लगाने लगे। अंत में कृष्णचंद्र जी ने कलियुग को आया जान संसार छोड़ने की ठानी और एक दिन एक वृक्ष के नीचे जा लेटे। श्रीकृष्णचंद्र जी के पैर में पद्म था, वह चमक रहा था। व्याधा ने समझा कि हिरण है, भ्रम-वश लोहे का टुकड़ा नोक पर लगा तीर चला दिया। श्राप-वश तीर जाकर कृष्णचंद्र जी के पैर में लगा, तत्पश्चात् उन्होंने अर्जुन को बुला गोपियों को सौंपा और आप संसार त्याग चले गये। इसी के पीछे पांडव लोग भी उत्तराखंड को गये और वहीं क्रम क्रम से धर्म के मार्ग में शरीर को त्यागते चले गये। इनके लिये हिमालय पर जाना लिखा है, जहाँ ऋषि, मुनि और देवता शरीर का त्याग अच्छा समझते हैं, वहीं पर पांडवों ने भी शरीर त्यागा। हिमालय में गलने का यही अर्थ है कि देवताओं की भाँति शरीर त्यागा। मनीपुर में जाकर अर्जुन मारे गये फिर अमृत द्वारा जिये। स्थान स्थान पर युद्ध हुआ; मगर जहाँ २ कठिनाई पड़ी कृष्ण-चन्द्र जी ने सहारा दिया। घोड़ा चारों ओर का चक्कर लगा कर

लौटा। यज्ञ सकुशल पूरा हुआ। युधिष्ठिर राज्य करने लगे। इस प्रकार ३६ साल बीत गये। इधर साम्ब ने पेट में लोहा बाँध कर दुर्वासा ऋषि से मज़ाक़ किया उन्होंने श्राप दे दिया कि इस पेट में जो कुछ है, उसी से यदुवंशियों का नाश होगा। लोहा रेता गया उसकी रेता से समुद्र का फेन बना। एक टुकड़ा बचा, उसको मछली निगल गई। मछली व्याधा के हाथ पड़ी। उसने उस टुकड़े को मछली के पेट से निकाल तीर की नोक पर लगाया। इसी तीर ने श्री कृष्णचन्द्र जी का अन्त किया। इधर एक दिन यदुवंशी समुद्र के तट पर पहुँचे, वहाँ श्राप-वश मतवाले हो समुद्र का फेन एक दूसरे पर फेंक नाश को प्राप्त हुए। कृष्णचन्द्र जी ने अपनी कुल की दुर्दशा देख अर्जुन को बुलाया। अर्जुन द्वारिकापुरी पहुँचे व श्री कृष्णचन्द्र जी के कहने से गोपियों को ले इन्द्रप्रस्थ की ओर चले, पंजाब में भीलों ने गोपियों को लूट लिया। अर्जुन ने कुछ न कर पाया।

इसी पर कवि ने कहा है कि :—

मानुष बली न होत है, समय होत बलवान।
भिल्लन लूटी गोपिका, वेई अर्जुन वेई बान॥

अर्जुन ने यह सारी कथा युधिष्ठिर को सुनाई तब श्रीकृष्णचन्द्रजी के न रहने से अपनी शक्ति क्षीण जान पाँचो भाई पांडव द्रौपदी समेत हिमालय की ओर तप करने चले गये। राज्य अभिमन्यु के पुत्र व अर्जुन के पोते परीक्षित को दे गये। हिमालय के गलने का हाल पहिले दिया जा चुका है।

युद्ध के पीछे की विशेष घटना

युद्ध के पीछे स्त्रियों के झुंड के झुंड युद्ध-भूमि में पहुँचे। बड़ा हाहाकार मचा। स्त्रियों का रोना-पीटना व चिल्लाना सुन पत्थर का भी हृदय फट रहा था। व्यास जी आये व सब को उपदेश दे

शांत किया। दुर्योधन आदि की स्त्रियाँ अपने अपने पतियों के साथ सती हो गईं। युधिष्ठिर ने बन्धु-बान्धवों तथा सम्बन्धियों की यथायोग्य विधि-पूर्वक क्रिया की। अन्त में विनय प्रार्थना द्वारा धृतराष्ट्र व गांधारी के शोक को कम किया। कृष्णचंद्रजी ने धृतराष्ट्र के हाथ से भीम को मरते मरते बचाया। व्यास आदि बहुत से ऋषि आये और सबने उपदेश देकर सब का दुख दूर करने का प्रयत्न किया। सब मिलकर भीष्म जी के पास गये वहाँ भीष्म जी ने सब को उपदेश दिया। उत्तरायण सूर्य्य होते ही भीष्म जी ने शरीर छोड़ दिया, ३६ साल राज्य करने के पीछे पांडव लोग परीक्षित को राज्य दे हिमालय गलने चले गये। क्रिया-कर्म करते समय कुंती ने युधिष्ठिर से कहा कि कर्ण तुम्हारा भाई है। युधिष्ठिर ने कुंती को श्राप दिया कि तुम ने इतनी बड़ी बात क्यों छिपाई। आज से स्त्रियों के पेट में बात न रहेगी।

आत्म-बोध

सुख की आशा में सभी, जन्म गयो अनमोल।
निर्भय आतम ज्ञान बिनु, सब जग डाँवाडोल॥
राम रावन बालि अंगद तेजधारी चल बसे।
भोज विक्रम भरथरी तजि राज्य भारी चल बसे॥
व्यास शंकर याज्ञवल्क्य आदिक जगत से उठ गये।
भीम दुर्योधन युधिष्ठिर सुधि बिसारी चल बसे॥
कर्ण से दानी व ज्ञानी शुक सरीखे भी गये।
सगर दुर्वासा जनक तजि मोह भारी चल बसे॥
कंस हिरणाकुश जरासंध से बली बेहाल हो।
हो गये काफ़ूर छोड़ी सब होशियारी चल बसे॥
कोटि छप्पन यादवों की भीड़ को भी साथ ले।
बीज व्रज में भक्ति का बोकर मुरारी चल बसे॥
कर लिया हुक्माँ वा लुक्माँ का भी लुक्माँ मौत ने।
खो गये दारा सिकंदर छत्रधारी चल बसे॥

पैर न धरते ज़िमीं पर वो मिले हैं ख़ाक में।
सब गये लाखों करोड़ों भी हज़ारों चल बसे ॥
अकबर आलमगीर और नौशेरवाँ भी न रहा।
छोड़ कर हाथी व घोड़े फ़ौज सारी चल बसे ॥
गये अफलाँतून रुस्तम ने न रोकी ढालहू।
छोड़ तोपें खड़ग बंदूकोकटारी चल बसे।
सिद्ध साधक और यती योगी मिले सब धूर में।
तुल गये फूलों से जो वो नर व नारी चल बसे ॥
नाथ गोरख और मुछंदर भी गये तन छोड़ कर।
श्राप वर देने में जय्यत मौनधारी चल बसे ॥
सब गये दंडी व संन्यासी तपस्वी देह छोड़।
चक्रवर्ती भूप और शाहोभिखारी चल बसे ॥
दिग्विजय करने को पंडित बन गये विद्यानिधान।
अन्त में तन छोड़ कर मत पंथधारी चल बसे ॥
चढ़ लिये बग्घी वा टमटम पालकी पीनस में ख़ूब।
जो सवारी से निकलते बिनु सवारी चल बसे ॥
पवन पी पी कर समाधि में रहे ग़लतान जो।
ब्रह्म के जाने बिना वह ब्रह्मचारी चल बसे ॥
संगमरमर के महल और सर्द ख़ानों में बसे।
वह यहाँ ही छोड़ सब अट्टा अटारी चल बसे ॥
जोड़ कर अरबों व खरबों ले खज़ाने खामे ख़्याल।
बकते ही बकते हमारी अरु तुम्हारी चल बसे ॥
जन्म भर व्यवहार में छल बल किया पाया न कुछ।
करते करते तैं बिगाड़ी मैं सम्हाली चल बसे ॥
रात दिन जन्मों में दूजा काम कोई ना किया।
पूजि के पुजि के बड़े भारी पुजारी चल बसे ॥
जन्म भर किया विषय भोगों में अन्धे बन गये।
काल दुर्लभ खोय कर जग से अनारी चल बसे ॥
सद्गुरू कृपा करी संसार को जाना असार।
जान के निज रूप निर्भय धार मारी टल हँसे ॥

ओ३म् शम्

उद्बोधन

ओ३म् नाम को दिल से प्यारे कभी भुलाना ना चहिये ।
पाकर नर का बदन रतन को ख़ाक मिलाना ना चहिये ॥
सुन्दर नारी देखि प्यारी मन को लुभाना ना चहिये ।
जलत अग्नि में जान पतंग समान समाना ना चहिये ॥
बिन जाने परिणाम काम को हाथ लगाना ना चहिये ।
कोई दिन का ख़्याल कपट का जाल बिछाना ना चहिये ॥
यह माया बिजली का चमका मन को जमाना न चहिये ।
बिछुड़ेगा संजोग भोग का रोग लगाना ना चहिये ॥
लगे हमेशा रंग संग दुर्जन के जाना ना चहिये ।
नदी नाव की रीति किसी से प्रीति लगाना ना चहिये ॥
बांधव जन के हेतु पाप का खेत जमाना ना चहिये ।
अपने पाँव पर अपने कर से चोट जमाना न चहिये ॥
अपना करना भरना दोष किसी पर लाना न चहिये ।
अपनी आँख है मन्द चन्द को दो बतलाना ना चहिये ॥
करना जो शुभ काज आज कर देर लगाना ना चहिये ।
कल जाने क्या हाल काल को दूर समझना ना चहिये ॥
दुर्लभ तन को पाय कर विषयों में गँवाना ना चहिये ।
भवसागर में नाव पाय चक्कर में डुबाना ना चहिये ॥
दारादिक सब घेर फेर तिनमें अटकाना ना चहिये ।
करी बमन के ऊपर फिर कर दिल ललचाना ना चहिये ॥
जान आपुनो रूप कूप गृह में लटकाना ना चहिये ।
पूरे गुरु को खोज बोझ मज़हब का उठाना ना चहिये ॥
बचा चाहे पापों से मन से मौत भुलाना ना चहिये ।
जो है सुख की लाग तो कर सब त्याग फँसाना ना चहिये ॥

जो चाहै तू ज्ञान विषय के बाण चलाना ना चहिये।
जो है मोक्ष की आश संग की पाश बढ़ाना ना चहिये॥
परमेश्वर है तन में, बन में, खोजन जाना ना चहिये।
कस्तूरी है पास मृग के घास सुँघाना ना चहिये॥
कर सत्संग विचार निहार कभी विसराना ना चहिये।
आतम सुख को भोग, भोग में फिर अटकाना ना चहिये॥

सेना की गणना

एक पेनी में—१ हाथी—३ घोड़ा—१ रथ—५ पैदल—कुल १० होते हैं। पेनी की हर संख्या को तिगुना कर दो तो एक सेना मुख होगा।

सेना मुख का तिगुना गुल्म व गुल्म का तिगुना गण व गण का तिगुना एक वाहनी व एक वाहनी का तिगुना पृतना व पृतना का तिगुना एक चमू व एक चमू का तिगुना एक अनी होती है।

दस अनी की एक अक्षौहिणी होती है—

इस प्रकार एक अक्षौहिणी में—नीचे लिखी सेना होती है—

हाथी—२१८७० — इक्कीस हज़ार आठ सौ सत्तर—
घोड़े—६५६१० — पैंसठ हज़ार छः सौ दस—
रथ—२१८७० — इक्कीस हज़ार आठ सौ सतर—
पैदल—१०९३५० — एक लाख नौ हज़ार तीन सौ पचास—

कुल मिलाकर २१८७०० दो लाख अठारह हज़ार सात सौ संख्या होती है।

अक्षौहिणी में हाथी व रथों की संख्या बराबर है। घोड़ों की संख्या रथों व हाथियों में हर एक से तिगुनी है। हाथी, घोड़े और रथ मिला कर जितने हैं उतने ही पैदल हैं। ऐसी ७ अक्षौहिणी पांडवों के पास व ग्यारह अक्षौहिणी दुर्योधन के पास थी।

उपसंहार

पाठक गण स्थान स्थान पर मंत्रों द्वारा हुए कार्य्यों को पढ़ेंगे। यंत्र, तंत्र और मंत्र तीन अंग हैं, जिनमें यंत्र, तंत्र का

प्रयोग तो बहुत है, परन्तु मंत्रों का बहुत ही कम। आधुनिक युग मंत्रों पर विश्वास ही नहीं करता, उलटी उसकी हँसी उड़ाता है, परन्तु मंत्र कोरी कल्पना नहीं वरञ्च ऋषियों, मुनियों, योगियों, तपस्वियों और साधु, महात्माओं की आत्मा की शक्ति हैं। सत्यव्रत में दृढ़ रहना, माया से बचते रहना, भगवत् चरणों में लीन रहना और शुद्ध सात्विक भोजन करना ये सब काम आत्मा को पवित्र तथा शक्तिशाली बनाने वाले हैं। आत्मा उसी परमात्मा का अंग है, जो सर्व शक्तिमान है तथा जिसकी विचित्र कारीगरी को देख दाँतों के नीचे उँगली दबानी पड़ती है, जिसके गुण-गान में कवियों ने ग्रंथ के ग्रंथ भर दिये हैं। आत्मा परमात्मा में रत हो क्या नहीं कर सकता। आधुनिक युग विज्ञान को लिये चल रहा है। प्राचीन युग अध्यात्म-ज्ञान को लेकर चल रहा था। अध्यात्म-ज्ञान ईश्वरीय-ज्ञान है, जो सशक्त, अजेय तथा विचित्रताओं का भण्डार है। इसी अध्यात्म-ज्ञान को जप, तप सतोगुण तथा श्रद्धा-द्वारा प्राप्त कर मनुष्य सब कुछ कर सकता था। उसके शब्दों में अपार बल था। बस जो कुछ मुँह से निकलता था वही आँखों के सामने आ जाता था। हर धर्म में महात्मा हुए हैं देखिये उन्होंने क्या क्या कर दिखाया। हिन्दू धर्म, इसलाम धर्म और ईसाई धर्म आदि सभी धर्मों के महात्माओं पर एक दृष्टि डालिये। देखिये उन्होंने क्या क्या कर दिखाया कैसे और क्यों? थोड़ा सा विचार कीजिये, बात प्रत्यक्ष हो जावेगी। पवित्र आत्मा सब कुछ कर सकता है। आप मन को वश में कीजिये, सच्चाई को गले का हार बनाइये, ईश्वर पर विश्वास लाइये, सतोगुण से प्रेम बढ़ाइये तथा शुद्ध, सात्विक भोजन कीजिये व सच्चिदानंद के चरणों में रम जाइये। देख लीजिये कि आप क्या से क्या हो जावेंगे।

ईश्वर ने सब प्राणियों में से मनुष्य को श्रेष्ठ बनाया है और मनुष्य के शरीर को शक्ति का भांडार बनाया है यदि उस भांडार की कुंजी मनुष्य ढूँढ़ ले और उस भांडार को पा ले तो वह अपनी उँगली के सहारे सारे संसार को नचाने में समर्थ हो सके।

साँप, बीछी के मंत्र देहातों में बहुत चलते हैं और लोग उन पर विश्वास भी करते हैं। इसी प्रकार शुद्ध रह कर और मंत्र भी काम में लाये जा सकते हैं। इन्हीं मंत्रों से कुंती ने देखिये क्या किया। साधारण पदार्थ मंत्र द्वारा कैसा विकराल बाण बन जाता था। तुलसीदास जी ने कहा है कि—

कलि बिलोक जग हित हरि गिरिजा। साबर मंत्र जाल जिन सिरजा॥
अनमिल अक्षर अर्थ न जापू। प्रकट प्रभाव महेश प्रतापू॥
मंत्राकर्षण जप दशभाला। अहिरावण चित डोल पताला॥

यदि उदाहरण दिये जावें तो उदाहरणों का ही एक भारी ग्रंथ बन जाय।

सच तो ये है कि—

दिल के आईने में है तस्वीरे यार। जब ज़रा गर्दन झुकाई देख ली॥

उस प्रभु के सामने सच्चे हृदय से गर्दन झुकाओ फिर देखो कि क्या २ करिश्मे नज़र आते हैं।

और देखिये कि—

ग़ैर का सायल न बन हक़ से फ़क़त हक़ माँग तू।
जब ख़ुदा हासिल हुआ सारी ख़ुदाई मिल गई॥

कबीरदास जी ने कहा है कि—

जो तू चाहे मुझ को, छाँड़ जगत की आस।
मुझ ही ऐसा होय रह, सब कुछ तेरे पास॥

प्यारे पाठक वृन्द! मंत्रों को हँसी न उड़ाइये बल्कि शब्दों में मंत्र की शक्ति उत्पन्न करने का प्रयत्न कीजिये।

———

आत्म-दर्शन
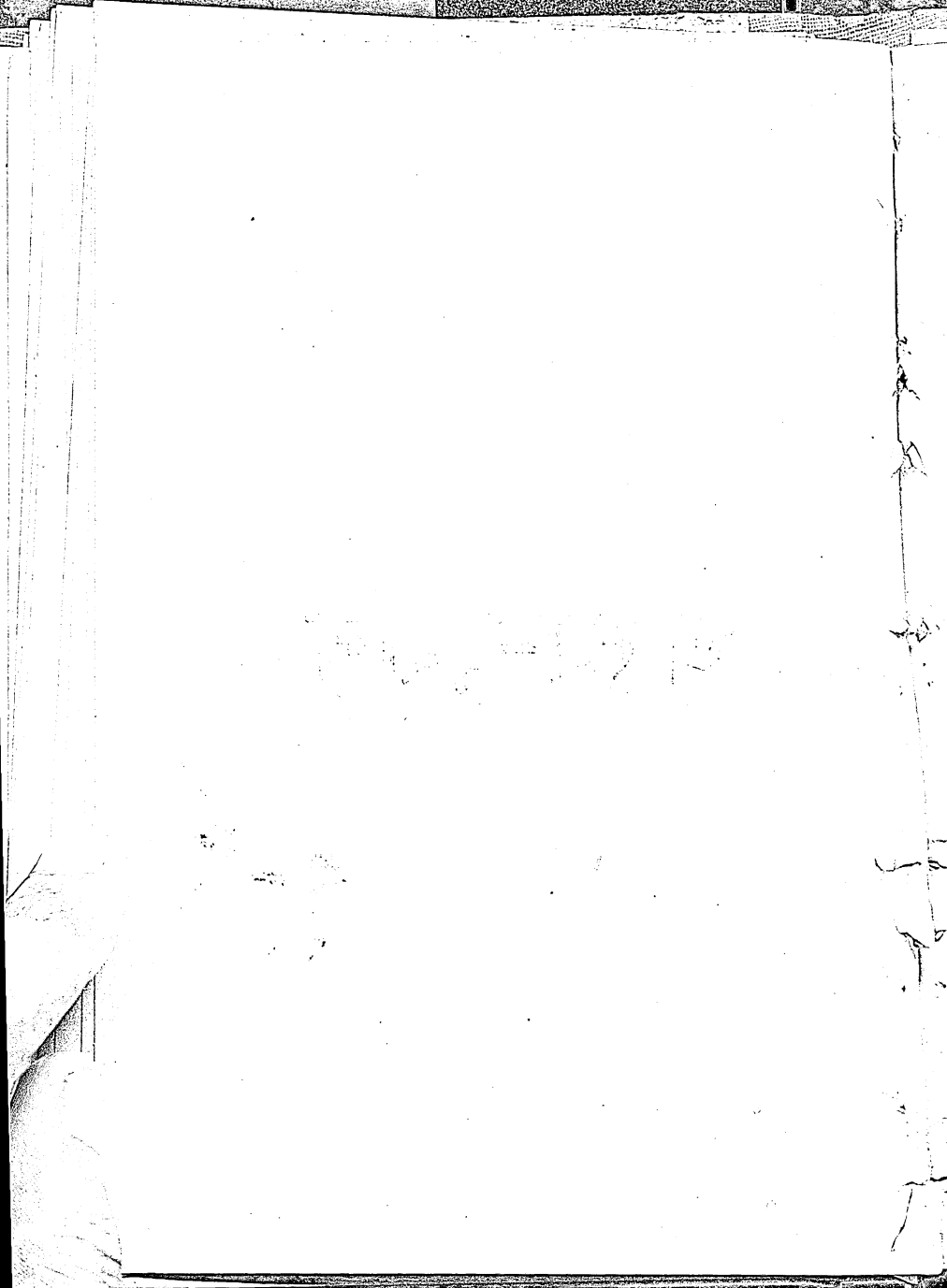
गुरु-शिष्य-सम्वाद

गुरु ने कहा, हे शिष्य ! तू भी आत्मदर्शी हो। शिष्य ने कहा, देखना दूसरे का होता है, मैं स्वयं आत्मा आत्मा को कैसे देखूँ ! जो जो देखने में, सुनने में, सूँघने में, स्पर्श में, रस लेने में, वाक्-उच्चारण में, मन के चिंतन में, ग्रहण-त्याग में, इत्यादि मन कर वाणी शरीर कर जाना जाता है, सो सो दृश्य जड़ अनित्य होता है। इससे सर्व के दृष्टायुक्त आत्मा का अन्य दृष्टा नहीं। गुरु ने कहा, हे शिष्य ! आवाङ्मन सगोचर, सर्वाधिष्ठान, जगविध्वंस, प्रकाशक, अवेध्यत्व, सदा अपरोक्ष, साक्षी, सच्चिद्घन, विशुद्धानंद, ब्रह्मात्मा, अपने स्वरूप को सम्यक् अपरोक्षहस्तामलकवत् (जाननेवत्) जानने का नाम आत्मदर्श है।

आत्मदर्शन और आत्मतत्व का निर्णय

मुमुक्षु शिष्य ने गुरु जी से प्रश्न किया कि हे गुरु ! तुम्हारी कृपा से देवताओं को भोग प्राप्त है, सो मुक्त को भी प्राप्त है, क्योंकि षट् विषय और षट् विषयों के ग्रहण करने वाले षट् इन्द्रिय तथा इन्द्रिय विषय के संयोग-वियोग, जन्म, सुख-दुःख का अनुभव, भोग और भोगों के साधन विषय, इन्द्रिय, ब्रह्मा से लेकर चींटो तक सम ही हैं, न्यूनाधिक नहीं, बिचारे बिना न्यूनाधिक भासती है। सम्यक् विचारे नहीं तो न्यूनाधिकता देख कर तप्त रहती है, अधिक को प्राप्ति की इच्छा होती है, न्यून में अहंकृत होती है, सर्व प्रकार सम वस्तु में दोनों नहीं, इसी विचार से शांति मन में होती है, अन्यथा नहीं मैंने सर्व कर्तव्य जगत् के स्वभाव शरीर का जाना है। जो दृश्यमान है, सो असत् भ्रम समझा है पर यह नहीं जानता कि मैं कौन हूँ ? कहाँ

से आया हूँ ? शरीर त्याग कर कहाँ जाऊँगा ? मूल मेरा क्या है ? जो मैं आत्मा होऊँ तो शरीर विषे क्यों आऊँ ? कारण मेरी उत्पत्ति का क्या है ? गुरु जी ने कहा, हे शिष्य ! मूल तेरा वह है, जिससे जगत् प्रकाशमान हुआ है। न तू कहीं से आया है, न कहीं जायगा, आकाश के समान पूर्ण अचल (स्थिर) है। आवागमन का तेरे विषे मार्ग नहीं। उत्पत्ति-नाश होना धर्म शरीर का है और शरीर शुभाशुभ कर्मों से होते हैं। कर्म चाहना से होते हैं। चाहना अज्ञान से होती है। अज्ञान अपने स्वरूप के पहचानने से होते हैं। और को अपने से भिन्न स्थाप कर और मुक्ति का सहायक मानकर (ईश्वर मेरी मुक्ति करेगा) आपको अर्थों और को दाता जानना ही अज्ञान है, नहीं तो वेद कहते हैं "मैं एक ही ईश्वर अनेक रूप हूँ" जैसे स्वप्न-द्रष्टा एक ही अनेक रूप होता है। इससे यह सृष्टि ज्योतिरूप ईश्वर ही है जैसे सूर्य की किरणें सूर्य-स्वरूप हैं। जब सर्वरूप ईश्वर ही पूर्ण हुआ तो आपको तिससे भिन्न शरीर व जीव मानना केवल अज्ञान है।

शिष्य ने प्रश्न किया कि क्या सब एक ही है ?

उत्तर—एक को भला और एक को बुरा ईश्वर रूप आत्मा विषे कैसे गिनिये ? भूल विषे पशु, स्थावर, मनुष्य, जंगमादि विचारवान को सम हैं, भेद नहीं। व्यवहारक जो लघु, दीर्घ, नीच-ऊँचादि भेद भासता है, सो फल कर्मों का है और अपने मूल के अज्ञान से भासता है, जैसे वृक्ष की शाखा, पत्र, फल, फूल का जो भेद भासता है, सो भूल के अज्ञान से भासता है, जैसे स्वप्न पदार्थों का जो भेद भासता है, सो स्वप्न-द्रष्टा के अज्ञान से भासता है, स्वप्न द्रष्टा के दृष्टि से नहीं।

प्रश्न—नरक जाने का मार्ग और मुक्ति का क्या उपाय है ?

उत्तर—हे शिष्य ! इंद्रियों का असज्जन रीति से पालना,

जीव को नरक ले जाता है, जो लौं संग संतों का न हो, त्याग
नहीं होता। अपने स्वरूप का पहचानना जो मुक्ति है, सत्संग से
प्राप्त होती है। हे शिष्य! जो कुछ मन-वाणी से नाम रूप कथन
चिंतन होता है, सो केवल आभासमात्र जान। जो असत् हो
उससे प्रीति मूल अज्ञान है।

आत्मा कैसी है ?

शिष्य ने कहा, हे प्रभो! सर्व स्वभाव पंच इंद्रियों-संयुक्त
यह पंच भूत रूप शरीर-सहित सर्व नाम रूप जगत् मृग-तृष्णा
के जल के तरंग के समान है, मूल इन सब का चैतन्य आत्मा
है, तो आत्मा कैसी है? गुरु ने कहा—पाप पुण्य से पवित्र, सर्व
वस्तु विषे स्थित भी अलिप्त कर्मों विषे बंध नहीं होता, मरण-
जीवन और बंध-मोक्ष से अतीत है। तत्वों से आदि लेकर सर्व
वस्तु तिस आत्मा को नाश नहीं कर सकते हैं। तात्पर्य यह कि
नाम रूप जगत् असत् है और आत्मा सत् है। दोनों का स्वभाव
अन्यथा नहीं होता।

उत्पत्ति और नाशवान पदार्थ आत्मा से भिन्न मिथ्या हैं।

हे गुरु! उत्पत्ति होकर जो विनशता है पुनः कर्मों में बंध होता है
सो कौन है? गुरु ने कहा, हे शिष्य! स्वप्न प्रपंच विषे,जैसे उत्पत्ति
विनाश, कोई कर्मों में, कोई मुक्त, कोई सुखी, कोई दुखी होता है
इत्यादि अनेक प्रकार की जो प्रतीति होती है, सो केवल निद्रा
रूप अविद्याकर है, वास्तव में स्वप्नद्रष्टा में नहीं। तैसे ही अपने
स्वरूप अधिष्ठान के अज्ञान से विषमता भासती है। वास्तव
में नहीं।

नाम और नामी

आत्मदर्शी ने कहा नारायणादि नाम भी नाश रूप होवेंगे
या नहीं? गुरु ने कहा, नाम शब्द मात्र है आकाश का गुण है,
इससे नाशी है, परन्तु नामी नाशी नहीं,क्योंकि नाम रूप का तथा

तिन के नाश का भी (आत्मा) स्वरूप है। हे शिष्य ! नाम रूप जगत् की बुद्धि से है, नाम रूप का अधिष्ठान आत्मा बुद्धि नहीं होता।

आत्म-प्राप्ति के हेतु गुरु-शिष्य कैसा चाहिये ?

पर इस भेद के पावने निमित्त गुरु पूर्ण और शिष्य श्रद्धावान चाहिये और संतों के संग से अचेत न होवे तो पावे।

स्वरूप क्या है ?

हे शिष्य ! यह सर्व स्तुति चैतन्य आत्मा की है और स्तुति से अतीत भी है, उपजने, विनशने का इस बुद्धि आदिकों के साक्षी आत्मा में मार्ग नहीं और न कभी इसको किसी ने देखा है, स्वयं प्रकाश होने से, जैसे—स्वप्न पुरुष स्वप्न द्रष्टा को कभी भी स्वप्न नर नहीं देख सकते। इस चैतन्य से भिन्न कौन है, जो देखे। पुरुष को विचार करना चाहिये कि इस जड़ संघात की चेष्टा कौन करता है ? वही मेरा रूप है। नाम रूप व्यवहार जगत् का है, जो परम्परा विचारें तो नाम रूप भी आत्म रूप है भिन्न नहीं, क्योंकि कल्पित नाम रूप जगत् की निवृत्ति अधिष्ठान आत्म रूप है। हे शिष्य ! तुझे जो आत्मदर्शी कहते हैं, सो कौन से अंग को कहते हैं ? क्योंकि सर्व अंग आप अपने नाम रखते हैं पुनः तिनका भी सूक्ष्म विचार करें तो निकसता भी कुछ नहीं, जैसे केले के पत्ते निकासते जावो तो शून्य ही शेष रहता है। इससे नाम रूप केवल कहने मात्र है।

क्या पुरुष नित्य है ?

हे शिष्य ! उत्पत्ति नाश शरीर का धर्म है, क्षुधा तृषा प्राणों का धर्म है, हर्ष शोकादि मन का धर्म है, जैसे पुराने वस्त्र उतार के पुरुष नवीन ग्रहण करता है, परन्तु पुरुष नित्य है, वस्त्र अनित्य है तैसे देह अनित्य है और देही नित्य है।

पूर्ण और पवित्र कब होता है ?

आत्मा देहाभिमान त्याग के पूर्ण होता है, जैसे बूँद व नदियाँ अपना नाम रूप अहं त्याग के समुद्र रूप होती हैं। जब शरीर त्यागता है पीछे भला बुरा रह जाता है। हे शिष्य ! जैसे नदी से थोड़ा जल निकास कर अपवित्र ठौर डाला, तब कोई तिसको अंगीकार नहीं करते और अपवित्र कहते हैं, जब पुनः नदी से मिला, पवित्र होता है अपवित्र उसका नाम नहीं रहता। तैसे सत् चित् आनन्द आत्मा रूप समुद्र के अज्ञान से, आपको भिन्न मानकर, अल्प जीव जानना और अपवित्र शरीर को अपना आप परिच्छिन्न मानना यही अपवित्रता है।

स्वरूप से कब तक भिन्न रहता है ?

जब लग असत् जड़ दुःख रूप शरीरादिकों में अहंकृत है, तब लग अपने स्वरूप समुद्र से भिन्न रहता है। जब शरीरादिकों में सम्यक् विचार से अहंकृत नर हो और आत्म स्वरूप सम्यक् अपरोक्ष जाना, तब पूर्ववत् सत् चित् आनन्द रूप आत्मा रूप समुद्र होता है।

व्यवहारों विषे असमता है सम कैसे कहें ?

आत्मदर्शी ने कहा, हे गुरु ! तुम्हारे वचन से मैं आपको पूर्ण ब्रह्मात्मा जानता हूँ, पर शुभाशुभ शरीर के स्वभाव मुझे प्राप्त होते हैं, तिन विषे सम कैसे होऊँ ? मैं देखता हूँ कि शुभ विषे अशुभ विषे अप्रसन्न होता हूँ, जो मैं पूर्ण आत्मा हूँ तो न होना चाहिये ? गुरु जी ने कहा, हे शिष्य ! तू आप ही कहता है,मैं देखता हूँ शुभा-शुभ विषे हर्षशोकी होता हूँ, इससे यह सिद्ध हुआ, तू हर्ष-शोक को देखने वाला है, हर्ष-शोक किसी और को होता है, तुझ को नहीं ! यह हर्ष शोकादिक मनादिक संघात के धर्म हैं, इससे इनकी वासना के त्याग विषे दृढ़ हो।

अपने विचारे बिना सुख नहीं

ब्रह्मा, बिष्णु, शिवादिक तुझे उपदेश करें और आप देहादिकों की वासना न त्यागे, तो स्वरूप की पहचान रूप मुक्ति कठिन है। भावे जितनी शुभ कर्म करने विषे तथा विद्या पढ़ने विषे अवधि (आयु) बितावे। जिसकी जगत (असत) से प्रीति है, विषयों से अघाता नहीं, उसको दोनों लोक की अप्राप्ति होती है, जो चाहना से अचाह है, सोई मुक्त है। हे शिष्य! सर्व श्रवण मनन निदिध्यासनादि साधन मन की शुद्धि वास्ते हैं, जब मन वश हुआ मानों त्रिलोकी का राज्य मिला। तुझे किसी अन्य ने बंधन नहीं किया है। जब तू आये सम्यक् देहाभिमान त्यागे मुक्त हुआ मुक्त होवेगा।

स्वरूप की प्राप्ति अति सुगम और अति कठिन है।

अपने स्वरूप का बोध सत्संग से होता है, ज्ञान, विज्ञान स्वरूप पाने तक है, आगे नहीं इससे आपको नित्य सुख-जान जो कर्म-रूप शरीर के बंधन से छूटे। स्वरूप जाने बिना अति कठिन भी है और जाने पर अति सुगम भी है।

किसको कठिन है?

जिसने इंद्रिय मन नहीं जीता और देह विषे अहंकारपूर्वक वासना नहीं त्यागी तिस को कठिन है।

किस को सुगम है?

जिसने पूर्वोक्त मन इंद्रिय जीतपूर्वक सर्व वासना त्यागी है तिस को सुगम है।

बुद्धिमान् को सैन ही बहुत है, मूर्ख सारी आयु सत्संग में बितावे तो भी कोरा रह जाता है, जैसे गंगा में पत्थर कोरे के कोरे रह जाते हैं। इससे इस शरीर-सहित जगत् को स्वप्नवत् मिथ्या जान और आप को शरीर मनादि संघात का द्रष्टा जान जो काल के भय से छूटे।

आत्मदर्शी ने कहा, संसार को मैंने असार जाना है, पर कहो
मैं कौन हूँ ? गुरु जी ने कहा तू संसार के असार जानने वाले का
अनुभव करने वाला है । तेरा अनुभव करने वाला कोई नहीं यह
जगत् तरंग तुझ चैतन्य समुद्र से हुआ है तुझ ही विषे लीन
होता है, पर तू चैतन्य एक रस है । जगद्रूप कर्म से अतीत है ।
जो दृश्यमान है तिन सब का तू जीवन रूप है, जैसे तरंगादिकों
का समुद्र जीवन रूप है । पर तूने आप को भुला कर शरीर माना
है इसी से तू अनेक भ्रमों में वध्यमान हुआ है । मुक्त रूप तू मुक्ति
को भ्रमकर चाहता है । अपनी पहचान कर, जब तू आपको
सम्यक् जानेगा तो बंध की निवृत्ति और मोक्ष की प्राप्ति की
इच्छा न करेगा, उलटा बंध मुक्त को भ्रम रूप जावेगा ।

साधन कब तक है ?

हे शिष्य ! तीर्थ, यात्रा, जप, तप, नियम, योग, यज्ञ, व्रत,
पूजादि, साधन तब तक हैं, जब तक साध्य रूप ब्रह्मात्मा का
सम्यक् अपरोक्ष नहीं हुआ, जब हुआ तो साधनों से क्या प्रयो-
जन है ? जैसे लड़कियाँ तब लग गुड़ियों से खेलती हैं, जब लग
पति नहीं मिला, जब पति मिला तो गुड़ियों से खेलने का क्या
प्रयोजन है ? कुछ नहीं ।

ईश्वर की प्राप्ति का उपाय

जो सत् चित् आनंद रूप ईश्वर की प्राप्ति के हेतु अपने स्वरूप
की पहचान का उपाय सत्संग-सहित सच्छास्त्र के विचार को
त्याग कर, अन्य साधन में प्रवृत्ति करते हैं, तो वे जैसे कोई गंगा
के किनारे जायकर गंगा जल को त्याग कर और जल पीवे और
स्नान करे, उसके समान है । इससे आपको पहचान और असत्
कर्मों का त्याग करना चाहिये ।

सब स्वप्नवत् है ।

आत्मदर्शी ने कहा, हे गुरु जी ! मैंने जगत को मृगतृष्णा के

जलवत् जाना है। उसमें मन नहीं बँधता है। शरीर को मिथ्या जान कर इनके पालने की इच्छा भी नहीं करता। यह इंद्रियों को ठग जान कर उनकी चाहना पीछे भी नहीं दौड़ता। चाहना से अचाह होकर अपने स्वरूप को पहचानना परमार्थ है। यह निश्चय किया है। जब तक आप को सम्यक् नहीं जाना तब तक हर्ष शोकादि रूप द्वैत में बंध है, पर आप को कैसे पहचानूँ? कौन वस्तु है, जिससे आत्मा का निश्चय करें? वह कौन भजन है, जिससे उसको प्राप्त होऊँ? मैंने सुना है कि रूप नहीं रखता अरूप को कैसे देखिये? ठौर उनकी कौन है? यह संसार क्षण विषे उत्पत्ति विनाश होने वाला है, इससे कैसे छूटूँ? गुरु जी हँसे और कहा, हे शिष्य! हर्ष, शोक, बंध, धर्म, अधर्म, राजा, रय्यत, चंद्र, सूर्यादि, अनेक प्रकार के स्वप्न में निद्रा कर, जगत् भासते हैं, पर जब जागा तब तिनकी रेखा भी नहीं मिलती जैसे जाग्रत जगत् भी जब लग अज्ञान है, तब लग अनेक भाँति के प्रतीत होते हैं। जब सम्यक् अपने स्वरूप की पहचान करेगा तो नाना रूप भासते भी एक रूप जानेगा तुझ मनादिकों के साक्षी चैतन्य बिना और दूसरा कौन चैतन्य है? जो तुझको जाने; क्योंकि ज्ञान-रूप तू ही चैतन्य है अन्य नहीं।

जीव कैसे ईश्वर होता है?

आत्मदर्शी ने कहा हे गुरु! मैंने जाना है कि मन इंद्रियों के वश-सहित स्वरूप का पाना सत्संग से है, पर यह पराधीन तुच्छ अल्पबुद्धि जीव कैसे ईश्वर होता है? गुरुजी ने कहा, ईश्वर का स्वरूप क्या है? आत्मदर्शी ने कहा सत् चित् आनन्द रूप ईश्वर का है। संत ने कहा सोई सत् चित् आनन्दरूपता इस बुद्धि आदिकों के साक्षी आत्मा में घटे तो तद्रूपता हुई व नहीं। जैसे दहकना उष्णता प्रकाशकता महान् अग्नि में है सोई चिनगारे में

है। महानता तुच्छता अग्नि में नहीं काष्ठ में है। जहाँ काष्ठ बहुत है, वहाँ अग्नि महान् प्रतीत होती है, जहाँ काष्ठ थोड़ा है, वहाँ अग्नि की तुच्छता प्रतीत होती है। इसी रीति से समुद्र जल का और बूँद जल का तथा महाकाश घटाकाशादिकों का भी दृष्टांत अपनी बुद्धि से विचार लेना।

स्वरूप-प्राप्ति में किसका अधिकार है ?

हे आत्मदर्शी! सारग्राही को तो इस में विरोध नहीं पड़ता, विवादी का इस विषय में अधिकार ही नहीं, क्योंकि यह धन सरल बुद्धिवालों का है अन्य का नहीं।

आत्मा सच्चिदानन्द रूप कैसे है ?

आत्मदर्शी ने कहा, यह प्रत्यक् आत्मा सत् चित् आनन्द रूप कैसे है? गुरु ने कहा तीनों कालों विषे तथा जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति तथा सत्व, रज, तम, जड़ आदि परस्पर भावाभाव होते भी यह प्रत्यक् आत्मा अबाध्य है; इसीसे सत् है तथा मनादिक सर्व संघात के सर्व व्यवहार को स्वयंरूपता कर जानता है इसीसे चैतन्य है। परम प्रेम का आस्पद होने से आनन्द-रूप है। हे शिष्य! ईश्वर व्यापक है, राजा के समान किसी देश में सभा लगा कर बैठा नहीं सब के हृदय में ईश्वर साक्षी रूपताकर स्थित है अन्य रीति से नहीं यह वेद महात्मा पुकारते हैं। किसी रीति से भी सत् चित् आनन्द रूप आत्मा से पृथ्वी ईश्वर का स्वरूप सिद्ध नहीं हो सकता। जो भिन्न सिद्ध करोगे तो असत् जड़ दुःख रूप सिद्ध होगा, क्योंकि देश काल वस्तु भेदवान पदार्थ अनित्य होता है।

सब का जानने वाला सबसे भिन्न

हे शिष्य! यह विचार भी रहने दे, परन्तु जिसको तू जानता है, चाहे वह वस्तु सत् हो, वा असत् पर तिसको जानने वाला तू तिससे भिन्न है। इससे तू आपको मनादिकों का साक्षी द्रष्टा जान, चाहे तू ईश्वर रूप है व अनीश्वर रूप है।

पण्डित अपण्डित कौन है ? बंध-मोक्ष कैसे होता है ?

हे शिष्य ! आप को बुद्धिमान जानके विषयों में लीन होता है, स्वरूप का विचार नहीं करता पर यह नहीं जानता कि चारों वेद पढ़ अंगों-सहित पढ़े और आत्मा-स्वरूप नहीं जाने तो अपण्डित है। जो एक अक्षर पढ़ना नहीं जानता पर गुरु आदि की कृपा से अपने स्वरूप को सम्यक् अपरोक्ष जाना है तो वह पण्डित है।

बंध मोक्षादि मन की कल्पना है।

इससे बंध मोक्षादि मन की कलपना है, वास्तव से नहीं जो वास्तव व्यावहारिक वस्तु होती है सो अविचार से तो उत्पन्न नहीं होती और विचार से निवृत्ति नहीं होती, जैसे घट पटादिक पदार्थ हैं, जिनका अविचार और विचार से उत्पत्ति नाश नहीं होता। सारांश यह कि ज्ञान अज्ञान से जो उत्पत्ति नाशवान वस्तु होती है सो भ्रम मात्र होती है, जैसे निद्रा दोष कर स्वप्नद्रष्टा के अज्ञान से तथा निद्रा की निवृत्ति रूप स्वप्नद्रष्टा के जाग्रत रूप ज्ञान से, स्वप्न प्रपंच का उत्पत्ति-नाश होता है। इससे मिथ्या है। स्वप्न-द्रष्टा की यह रीति नहीं जिस अधिष्ठान वस्तु के अविचार और विचार से बंध मोक्षादि प्रपंचमान होता तथा उसकी निवृत्ति होती है सो वस्तु सत् है। हे शिष्य ! बंध मोक्ष मन का फुर्ण अफुर्ण से प्रथम तू चैतन्य स्वतः सिद्ध है। मध्य में बन्ध मोक्षादि मान के फुर्ण का साक्षी है। बंध मोक्ष के अभाव मानने का अवधि-रूप अधिष्ठान है। इस प्रकार सर्व पदार्थ परस्पर भावाभाव रूप हैं तथा परस्पर व्यभिचारी हैं। तू चैतन्य साक्षी आत्मा सर्व में पूर्ण भी है तथा तुझ चैतन्य कर ही सब देह मनादिक जड़ पदार्थों की चेष्टा होती है। देहादिक अपनी प्रतीतिकाल में ही हैं अन्य काल में नहीं तू चैतन्य सब काल में एक रस निर्विकार मन

वाणी से गोचर है और सब मन वाणी का गोचर प्रपंच तुझ चैतन्य की दृश्य है, तू एक ही द्रष्टा सूर्यवत् प्रकाशमान है।

शिष्य ने कहा—हे स्वामी ! न्यूनाधिक प्रतीत क्यों होती है ?

स्वामी ने कहा, तुझ चैतन्य बिना और कुछ नहीं, तू नाम रूप स्थावर जंगम रूप जगत् से अतीत है, कर्म जाल से रहित है। न्यूनाधिक जो प्रतीत होता है सो स्वभाव माया का है, मूढ़ों की दृष्टि में है। आत्म विद्वान पुरुषों की दृष्टि में नहीं। जैसे सुवर्ण माटी जलादि स्वरूप के अज्ञात पुरुषों की तरंग भूषण घटादिकों में अनेकता भान होती है, जल माटी सुवर्ण के सम्यक् विद्वान पुरुषों को नहीं। हे शिष्य ! उत्पत्ति नाशादिक षट् विकार देह के हैं, तुझ चैतन्य-आत्मा के नहीं। तू हर्ष शोकादिक मन के धर्मों से रहित नित्यमुक्त है, आवागमन का तुझमें मार्ग नहीं।

शिष्य ने पूछा—हे स्वामी ! जप तप और दानादिकों का फल क्या होता है ?

स्वामी ने कहा—हे शिष्य ! जप, दान, तप, यज्ञादिकों का फल यही है कि अपने स्वरूप को जाने। कर्म, शरीर मनादि संघात करता है, मान आप लेता है, जिससे फल तिन कर्मों का अनेक देहों में सुख-दुःख भोगता है। जितने मूर्ख कर्म अधिक करते हैं, उतना ही अहंकार तिनको अधिक होता है, इसी से आत्म-स्वरूप को पाते नहीं। सब पदों के चाह से अचाह होवे, चाहना अपने स्वरूप के पहचानने की करे। निज स्वरूप के अपरोक्ष हुए ब्रह्म की जिज्ञासा भी न रहेगी, कनकरेणुवत्।

शिष्य ने पूछा—हे स्वामी ! सब दुखों का मूल क्या है ? उससे छूटना कैसे होता है ?

स्वामी ने कहा—हे शिष्य ! सब दुःखों का मूल अहंकार-

पूर्वक देहादिकों की वासना है और सुखों का मूल आपकी पहचान है अर्थात् आपको सब मनादिकों का द्रष्टा जानना, मनादिकों को दृश्य मिथ्या जानना। शरीरादि संघात् की, जैसे अज्ञात काल में चेष्टा होती है तैसे ज्ञात काल में होती है केवल दृष्टि-भेद है व आप-सहित सब अस्त भाँति प्रिय रूप आत्मा ही है, यह निश्चय ही परम निर्विकल्प अवस्था है। एक आत्मा अद्वितीय बिना और कुछ नहीं, जब ऐसे जाना तब आप होता है सर्व कर्मों के फल का दाता है, राजावत्, जो देखे, सुने, सूँघे स्पर्श रस लेवे, सो आप ही कर्त्ता भोक्ता है। कर्ता भोक्तापने से अतीत भी आपही होता है। जानता है मुझ चैन्तय साक्षी को न किसी ने उपजाया है और न मैं किसी से उत्पन्न हुआ हूँ न मैं इस शरीर विषे कर्मों से आया हूँ, क्योंकि मैं व्यापक आत्मा शरीर की उत्पत्ति से प्रथम स्थित हूँ। जैसे घट की उत्पत्ति से प्रथम ही आकाश स्थित है। इस विचार के निश्चय से शरीर रूप संसार में रहता भी पद्मकमलवत् संसार की मलीनता रूप बन्धन से मुक्त रहता है। यह आप ऊपर अपनी दया है।

प्रश्न—कर्म और उसमें अहंकार का फल

उत्तर—कर्म देहादिकों से स्वाभाविक पड़े होते हैं। तिन में अहंकार करना आपको नरक में गिरना है। जो अहंकार नहीं करते तो क्या उनका निर्वाह नहीं होता है? किन्तु होता है।

प्रश्न—नाम जपने का फल

उत्तर—जो नारायणादि नामों को जपते हैं, वे अन्तः-करण की शुद्धि को पाते हैं, परन्तु आत्म-सुख से अप्राप्त होते हैं, क्योंकि मुक्त नारायण विषे और अपने भेद समझते हैं, इसी से दीन रहते हैं। जब अपने आत्मा को मेरा रूप और मुझ नारायण को अपना रूप जाने तो कर्म-जाल-संसार से मुक्त होवे जैसे घटाकाश को महाकाश रूप निहसंगता बन सकती है जैसे मृग

की नाभि में कस्तूरी है, तिसको न जानके तिसकी प्राप्ति-वास्ते बन में ढूँढ़ता फिरता है तैसे तू चैतन्य आत्मा अनित्य मुक्त-स्वरूप है, भ्रम कर आपको न जानके मुक्त को आशा औरों से करता है। अनेक कर्म उपासनादि भ्रम से क्लेश सहता है।

प्रश्न—गुरु शास्त्रादि की सत्ता

ऐसा भ्रम करता है कि गुरु शास्त्र ईश्वर मेरी मुक्ति करेगा तो होगी यह नहीं जानता कि मुझ नित्य मुक्त चैतन्य साक्षी आत्मा की स्वप्नवत् गुरु शास्त्र ईश्वरादि सब संसार कल्पना है, मैं नहीं कल्पूँ तो कहाँ है यह विज्ञान रहस्य है इसमें शंका की ज़रूरत नहीं है बुद्धि की ज़रूरत है।

प्रश्न—सर्वभोक्ता और सर्वकर्ता कौन है ?

उत्तर—आपको शरीर मान के आप बन्धन में पड़ा है और भोगों की चाहना करता है। यह नहीं जानता कि मैं चैतन्य ही सब जड़ पदार्थों में स्थित हुआ २ सब का भोक्ता हूँ तथा सर्व का कर्त्ता हूँ। वास्तव में मैं चैतन्य माया कर कर्त्ता भोक्ता हुआ २ भी वास्तव से अकर्त्ता अभोक्ता हूँ।

प्रश्न—बन्धन से मुक्त होने का मुख्य कर्त्तव्य क्या है ?

उत्तर—इससे हे शिष्य ! देहाभिमान के त्याग को त्याग कर, देख जो शेष है सो तेरा स्वरूप है। जो जो मन वाणी का कथन-चिंतन है, तिस तिस कथन-चिंतन का तू साक्षी हुआ तिस तिस कथन-चिंतन से अतीत है आपको जीव मान कर मन की तथा शरीर की चाहना विषे बँधा हुआ है और मूल अपना विसारा है सुख रूप तू आप है और अन्य से सुख चाहता है। कैसे प्राप्ति हो जब तू अपने सम्यक् स्वरूप को जाने तब सब भ्रम मात्र बन्धन से मुक्त होवे अथवा आपको बीच से उठा देवे कि मैं नहीं हूँ सब भगवत ही है। करता भोगता सुख दुःख बन्ध मोक्षादि

सब ईश्वर ही है। इस निश्चय से भी सब बन्धन से मुक्त होगा।

प्रश्न—स्वर्ग नर्क पाप-पुण्य आदि की प्राप्ति क्यों होती है? जो सब आत्मा ही है तो पाप-पुण्य स्वर्ग-नर्क आदिकों को क्यों प्राप्त होते हैं?

उत्तर—निरसंशय तो सब आत्मा ही है। आवागमन मलीनता शुद्धता, बंधमोक्ष आदि संसार-धर्म से मुक्ति स्वतः ही सिद्धि है। कोई यतन से नहीं। न तो चैतन्य साक्षी आत्मा का नाश है। न जन्म है न आना न जाना है, क्योंकि तू देश काल वस्तु के परछिद्र से रहित है पूरण सदा निर्भय स्थित है। अपने को भूलकर जीव माना है इसी से पुण्य-पाप आदिक के भ्रम से बंधन में पड़ा है। वास्तव में नहीं भ्रम से ही अनेक शरीरों में अभिमान-पूर्वक सुख-दुख पाता है। कल्पना बंध मोक्ष को सत मानकर मूल अपना विसारा है।

प्रश्न—सब जीवन का सार क्या है?

उत्तर—यह बुद्धि आदिक साक्षी आत्मा सब जगह का जीवन रूप है, क्योंकि असत् जड़ दुख रूप इस शरीर-सहित संसार को अपने स्वरूप से सत् चित्त आनन्द रूप करता है। जैसे तरंग आदिकों को जल मधुरता शीतलता दे वक्ता रूप करता है तैसे ही आत्मा केवल नियंत्रता, निर्मलता सत् वस्तु पर है। जब सब ब्रह्म आत्मा है तो अपना सच्चिदानंद साक्षी आत्मा से परमेश्वर को भिन्न मानना और आपको दास मानना अखंड को खंड करना है। दूसरा सत्चित्त आनन्द रूप आत्मा से भिन्न परमात्मा को जानना तो परमात्मा असत्य जड़ दुखरूप अन्य आत्मा सिद्धि होगा और परमेश्वर इस पर अत्यंत कोप करेगा, क्योंकि अखंड ईश्वर को इसने असत्य जड़ दुख रूप अन्य आत्मा जाना है। इसी से इस ज्ञान से इसका निकृष्ट होगा, क्योंकि कोई

जानकर किसी को बुरा चिन्तन व कथन करता है तब वह जानकर तिस पर महान रंज होता है तैसे ही अंतर्यामी परमात्मा को पूर्वक प्रकार से असत्य जड़ दुख रूप अन्य आत्मा चिन्तन कथन से क्यों न कोप करेगा ? ऐसा कौन बुद्धिमान है, जो अपनी हानि के वास्ते परमात्मा का ध्यान करेगा ?

प्रश्न—पूजने योग्य देव कौन है और पूजन किस की कैसी होती है ?

उत्तर—हस्तपद आदि से युक्त ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदिक भी देव नहीं हैं। सूर्य, चन्द्रमा, वायु, अग्नि, पृथ्वी, इन्द्र, यम, कुवेर आदिक भी देव नहीं है न तू है न मैं हूँ न देव हूँ न ब्रह्म न आदि न वर्ण न आश्रम न मन न इन्द्रिय न देह आदिक देव हैं, किन्तु सब के हृदय विषय वर्तमान काल का ज्ञान है अक्रिया अनादि सत् चित् सुख रूप आत्मा देव है यह दो अत्तर जब लग कथन चिन्तन न करे तब लग भविष्यत अहमपना है—अहंकार कथन चिन्तन के आरंभ करते ही अहंकार भूत में गया और अहंकार भविष्यत में है। मध्य के काल में अहंकथन चिन्तन नहीं है सो काल निर्विकल्प है। इस प्रकार सब पदार्थ भविष्यत् के भूत काल होते चले जाते हैं यह ही अन्य में महत्ता है, परन्तु पूर्वक रीति से वर्तमान काल निर्विकल्प है तिस निर्विकल्प वर्तमान काल का ज्ञान अति निर्विकल्प है। निरंकार है, सोई देव है, सोई अपना स्वरूप है, भूत भविष्यत् काल तथा भूत भविष्यत काल में होने वाला पदार्थ सब वर्तमान काल का ज्ञात दैव से ही सिद्ध होता है, परन्तु अपने स्वरूप की निर्विकलपता के बोध के वास्ते वर्तमान काल का ज्ञात कहा है। द्रष्टा अद्रष्टा के मिलाप-विषय जो आनंद रूप अनुभव है, सो दैव है तथा आप सब को प्रकाशता हुआ भी निर्विकल्प है। स्वप्नद्रष्टावत् सोई दैव है। अन्तर,सत्, असत् नाम, भाव, अभाव, पदार्थ जिस कर सदा होते हैं तथा जाग्रत, स्वप्न,

सुषुप्त तिन में वर्तमान वाला मन आदि जगत जिस कर सिद्ध होता है जो आप किसी मन आदिकों से सिद्ध नहीं होता सोई सब का अपने आप स्वरूप देव है। अन्तर जिस कर मन के मनन का व्यौरा पड़ता है सोई देव है। ब्रह्मा से लेकर चींटी पर्यन्त सब का अपना आप स्वरूप है। इसके जानने से बन्ध मोक्ष का भ्रम छूटता है।

प्रश्न—देव का पूजन किस विधि से होता है ?

उत्तर—तीन कांड के रहने से देव का पूजन है। इस सुख रूप मन आदिकों का साक्षी देव का सामयिक दर्शन, वास्तव और अंतःकरण रूप आदेश को मलीनता की दूर करने के वास्ते देव अर्पण निष्ठकर्म की श्रद्धा सम-दम आदि साधन-पूर्वक अनुष्ठान रूपी पूजा है। दूसरी पूजन यह कि अंतःकरण की चंचलता के दूर करने के वास्ते चित्र आदिकों की पहिचान करने वाले देव का ध्यान करना रूप उपासना पूजा है व अपने सहित सब जगत को सत् चित् सुख हरि रूप जानना नाम भाव न करना दूसरी अग्नि-उपासना ध्यान रूप पूजा है अस्त भाँति प्रिय रूप करके निज स्वरूप बुद्धि में जँच जाना ही ज्ञान है। जब तक दृढ़ निश्चय नहीं हुआ तब तक गुरु-वाक्य से बारबार अहंकार करके निरंतर भावना करनी यही अग्नि-उपासना है। तीसरा पूजन यह है कि निश्चय में अपने आत्म-स्वरूप को सम जानना देव-पूजन में हर्ष है तो मन को है, शोक है तो मन को है मोक्ष न हो तो मन को है बन्ध हो या न हो तो मन को है, जन्म, मरण आदि विकार ज्ञान अज्ञान आदि मन के धर्म हैं। इन साक्षी मुझ चैतन्य का पूर्वक व्यवहार एक भी नहीं है। इस निश्चय का नाम पूजन है। मन, वाणी, प्राण का चिंतन, कथन करे व न करे व पूर्वक शब्द का कथन व चिंतन

करे व न करे पर मुझ चैतन्य साक्षी आत्मा का किंचित् मात्र भी हानि-लाभ नहीं। इस दृढ़ निश्चय का नाम पूजन है।

मन की पाँच निशानी हैं :—

भजन करने में स्वाद नहीं आता है। काल का और ईश्वर का बिल्कुल खौफ़ नहीं। कोई आत्म-निरूपण सुनता भी है तो उसको भुला देता है और माया के पदार्थ जो मिथ्या हैं, उनको सत् मानता है। प्रथम अपने अंतःकरण में सुमति होना चाहिये दूसरे सत् गुरु होना चाहिये और उपदेश वाला मित्र होना चाहिये और धर्म-रक्षक माता-पिता होना चाहिये। नीतिवान् राजा चाहिये। पराई स्त्री को माता के समान और पराये धन को मिट्टी के समान, दूसरे के दुख को अपने समान समझना चाहिये। ईश्वर कौन है और मैं कौन हूँ? भक्ति व निश्चय ज्ञान मनुष्य का कर्त्तव्य है। चिंता आयु को खा जाती है। कृपणता जीविका को कम कर देती है। निद्रा ध्यान को कम कर देती है और त्याग पाप को खतम कर देता है। उदारता दुख को दूर करती है। झूठ बोलने से धर्म नाश हो जाता है, लोभ करने से संतोष मिट जाता है। क्रोध करने से बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, काम में प्रवृत्त होने से तेज जाता रहता है। अभिमान से उदारता नष्ट हो जाती है।

प्रश्न—धर्म का तत्व क्या है?

उत्तर—सच्चाई।

साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जाके हृदय साँच है, ताके हिरदय आप॥

प्रश्न—सच्चाई का तत्व क्या है?

उत्तर—ग़रीबी और नम्रता।

प्रश्न—ग़रीबी और नम्रता का तत्व क्या है?

उत्तर—संतोषं परमं सुखम्-अतितो तृष्णा परम् व्याधि-संतोष। कहा है कि :—

तृष्णा दुख की जड़ है, तृष्णा माया का फंदा है।
वह जीवन मुक्त नहीं होता, जो इस तृष्णा का बंदा है।
यह चिंता चिता से बढ़ कर है, घुन के समान लग जाती है।
मुर्दे को चिता जलती है, जीते को तृष्णा खाती है।
छूट गये सब अँगले बँगले, ख़ाली बारादरी पड़ी है।
लाखों आये लाखों चले गये, तब भी तृष्णा अड़ी रही है।

प्रश्न—ज्ञानी तत्ववेत्ताओं की पहिचान क्या है?

उत्तर—जब लग तेरे नेत्र न खुलें तब तक न जान सकेगा। जैसे सोया पुरुष जागे बिना जाग्रत पुरुष को नहीं जानता, जिनका देह अभिमान स्वाभाविक मिटा है और आत्मा को स्वाभाविक अपरोक्ष जाना है, तिन को गृह और वन तुल्य है। जो प्रबोध कर प्राप्त होता है हर्ष-शोक से रहित प्रसन्न रहता है ग्रहण-त्याग की कल्पना मन में वास्तविक नहीं है। व्यौहार में ग्रहण-योग्य को ग्रहण करते हैं। त्यागने-योग्य को त्यागते हैं, हँसने के स्थान में हँसते हैं, रोने के स्थान में रोते हैं। सारांश यह है कि जैसा देश काल होवे उसके अनुसार चेष्टा करते हैं, पर अपने सुख-स्वरूप आत्मा से पृथक् जगत को नहीं जानते।

हे साधु! अपने सोहं रूप अपरोक्ष के लिये प्रथम अन्तःकरण की शुद्धि के वास्ते तुम निष्काम कार्य करना, अपने चैतन्य सोहं रूप आत्मा से पृथक् देह आदिकों में आत्मा बुद्धि होनी यही अहंकार रूपी वासना का सोहं रूप परमात्मा ने कहा है, क्योंकि इस अहंकार-पूर्वक ही आगे सुख-दुख रूप संसार फँसा रहता है जैसे बीज से ही वृक्ष फँसा रहता है। संसार समुद्र का फूल बीज नाम अहंकार है।

Printed by K. B. Agarwala at the Shanti Press, Allahabad.